सत्यमेव जयते

उत्तर क्षेत्रीय
किसान मेला
एवं
कृषि उद्योग प्रदर्शनी

कृषकों, बागवानों एवं कृषि उद्यमियों हेतु कृषि साहित्य

15 से 17 अक्टूबर, 2026

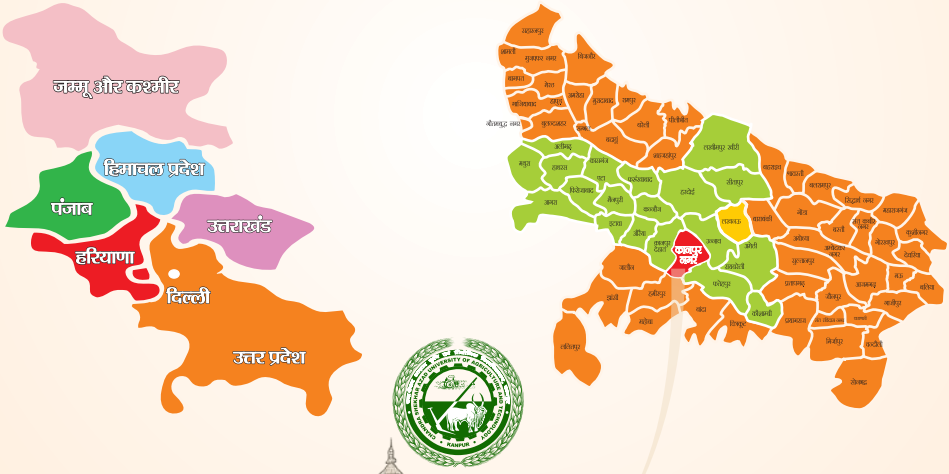

प्रसार निदेशालय

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर



सम्पादकगण

डा. विवेक कुमार त्रिपाठी, निदेशक प्रसार एवं अधिष्ठाता, उद्यान संकाय
डा. महक सिंह, निदेशक, कृषि प्रयोग केंद्र
डा. कौशल कुमार, अधिष्ठाता, कृषि संकाय
डा. अखिलेश मिश्र, अर्थ वनस्पति विद्, दलहन अनुभाग
डा. राम जी, प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, दुग्ध विज्ञान विभाग
डा. पी. के. राठी, सह निदेशक प्रसार
डा. विजय कुमार कनौजिया, अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, कन्नौज
डा. भूपेन्द्र कुमार सिंह, प्रभारी अधिकारी, कृषि विज्ञान केंद्र, फर्रुखाबाद
डा. विनोद प्रकाश, प्रभारी अधिकारी, कृषि विज्ञान केंद्र, फिरोजाबाद
डा. साधना वैश, प्रभारी अधिकारी, कृषि विज्ञान केंद्र, फतेहपुर

कृषि से सम्बन्धित जानकारी हेतु प्रसार निदेशालय के अधिकारियों/वैज्ञानिकों के नाम एवं मोबाइल नम्बर

डा. वी. के. त्रिपाठी, निदेशक प्रसार	:	8299373118
डा. पी. के. राठी, सह-निदेशक प्रसार	:	9140953889, 9415084830
डा. वी. के. कनौजिया, नोडल अधिकारी (आर.के.वी.वाई.)	:	9415488976
डा. भूपेन्द्र कुमार सिंह, प्रसार निदेशालय	:	6393919930
डा. विनोद प्रकाश, प्रसार निदेशालय	:	9411941294
श्री दीपक पाण्डेय, प्रसार निदेशालय	:	6394455077

प्राक्कथन

डॉ. संजीव गुप्ता
कुलपति

Dr. Sanjeev Gupta
Vice Chancellor

चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय,
कानपुर-208002, उत्तर प्रदेश, भारत
Chandra Shekhar Azad University of Agriculture & Technology,
Kanpur-208002, Uttar Pradesh, India



भारत की अर्थव्यवस्था, खाद्य एवं पोषण सुरक्षा तथा ग्रामीण विकास में कृषि की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में कृषि केवल खाद्यान्न उत्पादन का माध्यम नहीं, बल्कि करोड़ों परिवारों की आजीविका, ग्रामीण रोजगार, उद्यमिता तथा देश की आत्मनिर्भरता का महत्वपूर्ण आधार है। देश ने विगत दशकों में कृषि उत्पादन के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है।

सीमित भूमि एवं जल संसाधनों में बढ़ती खाद्य एवं पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अब केवल उत्पादन बढ़ाना पर्याप्त नहीं है, बल्कि प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादकता, संसाधन उपयोग दक्षता, कृषि उत्पाद की गुणवत्ता तथा कृषक की शुद्ध आय में वृद्धि करना आवश्यक है।

वर्तमान कृषि परिदृश्य में जलवायु परिवर्तन एक महत्वपूर्ण चुनौती बनकर उभरा है। तापमान में वृद्धि, वर्षा के स्वरूप में परिवर्तन, असामान्य वर्षा, सूखा, अतिवृष्टि, ओलावृष्टि तथा नये कीट एवं रोग प्रकोप जैसी परिस्थितियाँ फसल उत्पादन एवं कृषक आय को प्रभावित कर सकती हैं। सशक्त किसान का अर्थ केवल अधिक उत्पादन करने वाला किसान नहीं, बल्कि वैज्ञानिक ज्ञान से समृद्ध, तकनीकी रूप से सक्षम, संसाधनों का कुशल उपयोग करने वाला, बाजार से जुड़ा, मूल्य संवर्धन करने वाला तथा विविध आय-स्रोत विकसित करने वाला किसान है।

आज आवश्यकता है कि किसान पारंपरिक फसल उत्पादन के साथ एकीकृत कृषि प्रणाली, फसल विविधीकरण, बागवानी, पशुपालन, दुग्ध उत्पादन, मत्स्यपालन, बकरी पालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन तथा कृषि प्रसंस्करण जैसे उद्यमों को अपनाएँ। इसी प्रकार मृदा परीक्षण एवं मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, संतुलित उर्वरक उपयोग, जैव उर्वरक, जैव-नियंत्रण, एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन, सूक्ष्म सिंचाई, फर्टीगेशन, उन्नत एवं जलवायु-अनुकूल किस्मों, गुणवत्तायुक्त बीज, कृषि यंत्रीकरण तथा डिजिटल कृषि तकनीकों को खेत स्तर तक पहुँचाना समय की आवश्यकता है।

कृषि को लाभकारी बनाने के लिए केवल उत्पादन ही नहीं, बल्कि कटाई के बाद प्रबंधन, भंडारण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग, ब्रांडिंग एवं विपणन पर भी ध्यान देना होगा। कृषि उत्पाद का मूल्य खेत से बाजार तक प्रत्येक चरण में बढ़ाया जा सकता है। कृषक उत्पादक संगठन, स्वयं सहायता समूह, सहकारी संस्थाएँ तथा ग्रामीण उद्यमिता इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार के माध्यम से कृषकों तक नवीनतम वैज्ञानिक तकनीकों को पहुँचाने के लिए निरंतर प्रयासरत है। विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित एवं अनुशंसित तकनीकों को सरल, व्यावहारिक एवं स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप कृषकों तक पहुँचाना हमारी प्रमुख प्राथमिकताओं में है। इसी उद्देश्य से आयोजित यह मेला किसानों, वैज्ञानिकों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं, कृषि उद्यमियों, सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थाओं तथा कृषि से जुड़े अन्य हितधारकों को एक साझा मंच प्रदान करता है।

मुझे विश्वास है कि इस मेले में प्रदर्शित वैज्ञानिक तकनीकें, कृषि नवाचार एवं विशेषज्ञों की सलाह कृषक बन्धुओं के लिए उपयोगी सिद्ध होंगी तथा उन्हें उत्पादन बढ़ाने, लागत घटाने, कृषि में विविधीकरण एवं मूल्य संवर्धन अपनाने और अपनी आय के स्थायी स्रोत विकसित करने में सहायता प्रदान करेंगी।

इस महत्वपूर्ण प्रकाशन के लिए मैं सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों, कर्मचारियों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं, प्रदर्शकों एवं सहभागी संस्थाओं को हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ तथा आशा करता हूँ कि यह मेला किसानों के ज्ञान, कौशल एवं आय को सशक्त करने की दिशा में एक प्रभावी मंच सिद्ध होगा।

(डॉ. संजीव गुप्ता)



कृषक साहित्य

- कमलम फल (ड्रैगन फ्रूट) की वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक
- स्ट्राबेरी की उत्पादन तकनीक
- रबी में सब्जियों की खेती
- कद्दू वर्गीय सब्जियों की उत्पादन तकनीकी
- ग्लेडियोलस उत्पादन तकनीक
- द्वि-उद्देशीय जौ की खेती
- गेहूँ की वैज्ञानिक खेती
- श्री अन्न की खेती की वैज्ञानिक तकनीक
- दलहनी फसलों की उत्पादन तकनीक
- तिलहनी फसलों की उत्पादन तकनीक
- ट्राईकोडर्मा एक उपयोगी जैव फफूँदी नाशक
- मशरूम की खेती
- मृदा स्वास्थ्य में जैविक खादों का महत्व
- पशुपालन कैसे करें?
- ग्रामीण महिलाओं हेतु कुटीर उद्योग
- प्रसार निदेशालय द्वारा संचालित कृषि प्रसार के कार्यक्रम

कमलम फल (ड्रैगन फ्रूट) की वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक

कमलम फल (ड्रैगन फ्रूट) किसानों की आय में वृद्धि के साथ साथ पोषक तत्वों से भी परिपूर्ण है। यह फल पोषक तत्वों से भरपूर है और इसमें एंटीआक्सीडेंट, विटामिन और खनिज होते हैं, जो कोलेस्ट्राल, हृदय रोग और मधुमेह जैसी बीमारियों को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।

कमलम फल (ड्रैगन फ्रूट) के प्रकार: कमलम फल (ड्रैगन फ्रूट) मुख्यतः तीन रंगों में पाये जाते है-

१. गुलाबी छिलका, सफेद गूदा (सेलेनिसेरस अंडाटस) - सबसे सामान्य किस्म
२. गुलाबी छिलका, लाल गुलाबी गूदा (सेलेनिसेरस कोस्टारिसेंसिस) - स्वाद और रंग दोनों में उत्तम
३. पीला छिलका, सफेद गूदा (सेलेनिसेरस मेगालेंथस) - मीठा और रसदार

उपर्युक्त जलवायु: कमलम फल के लिए गर्म और उष्ण कटिबंधीय जलवायु की आवश्यकता होती है, 20–35°से० के बीच का तापमान सबसे आदर्श है। पौधों को ठंड से बचाना जरूरी है, क्योंकि 0°से० से नीचे का तापमान इन्हें नुकसान पहुंचा सकता है, पौधे को अच्छी तरह से बढ़ने के लिए प्रतिदिन कम से कम 6 घंटे सीधी धूप की आवश्यकता होती है। अच्छी जल निकासी वाली रेतीली या दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। मिट्टी का पीएच मान 5.5–7.5 होना चाहिए।

भूमि और भूमि की तैयारी: ड्रैगन फ्रूट के लिए जमीन तैयार करने के लिए, पहले खेत की गहरी जुताई करके मिट्टी को भुरभुरा बनाएं, फिर जैविक खाद और रासायनिक उर्वरक मिलाकर गड्ढे तैयार करें और अच्छी जल निकासी सुनिश्चित करें।

रोपण सामग्री: कमलम फल को तने की कटिंग तथा बीज दोनों से ही उगाया जा सकता है, कटिंग सबसे आम और प्रभावी तरीका है। परिपक्व पौधे से 20–25 से मी लंबी स्वस्थ, रोगमुक्त तने को चुनें, कटिंग के कटे हुए सिरों को 1–2 दिन के लिए सूखने दें ताकि लेटेक्स सूख जाए, फफूंद संक्रमण से बचाने के लिए कवकनाशी से कटे हुए सिरों का उपचार करें। रोपण सामग्री को मिट्टी, गोबर और रेत के 1:1:1 के अनुपात वाले मिश्रण में लगाया जाना चाहिए। इसे बीज से भी उगाया जा सकता है, लेकिन इसमें फल आने में अधिक समय लगता है और फल का प्रकार भी मूल पौधे से भिन्न हो सकता है।

खाद एवं उर्वरक की मात्रा: कमलम फल के रोपण के दौरान 100 से 200 ग्राम प्रति पौधा जैविक खाद और 100 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट प्रदान करें। पहले दो वर्षों में, प्रति पौधे में 300 ग्राम नाइट्रोजन, 200 ग्राम फास्फोरस और 200 ग्राम पोटेशियम दें। प्रत्येक परिपक्व पौधे के लिए 500 ग्राम नाइट्रोजन, 700 ग्राम फास्फोरस और प्रति वर्ष 300 ग्राम पोटेशियम प्रदान करें। पोषक तत्वों की इस खुराक को सालाना चार खुराक में दिया जाना चाहिए।

सिंचाई और पद्धति: पौध रोपण के समय, फूल आने के समय और फल के विकास के समय, मौसम शुष्क और गर्म होने पर हल्की सिंचाई कर देना सर्वोत्तम है जिससे फल रंग आकर्षक फल का विकास और उसमें उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा अच्छी होती है और फल आकार में भी बड़े होते हैं। इसके लिए सिंचाई की सबसे उपयोगी विधि बूंद बूंद पद्धति की आवश्यकता हैं।

फलों की तुड़ाई: कमलम फल मुख्यता द्वितीय वर्ष के अंत से फल देना शुरू कर देते हैं लेकिन व्यवसायिक फलत की शुरुआत 4 से 5 साल में होती है। सामान्यता मई और जून में फूल आना शुरू हो

जाते हैं और फल जुलाई से दिसंबर तक लगे रहते हैं फूल आने के लगभगएक महीना बाद कल की तुड़ाई कर लेते हैं। एक वर्ष में लगभग 4 से 5 बार तुड़ाई करते हैं।

बीमारी और कीट नियंत्रण–

एन्थ्रेक्नोज– यह फल के पौधे के तनों, फूलों और फलों पर गहरे, धँसे हुए घावों के रूप में प्रकट होता है। इन घावों में गुलाबी या नारंगी रंग का बीजाणु समूह हो सकता है, जो कवक रोगजनक की उपस्थिति का संकेत देता है। रोग के प्रसार को रोकने के लिए संक्रमित पौधों के भागों को तुरंत हटा दें और नष्ट कर दें। स्वस्थ पौधों के ऊतकों की रक्षा के लिए तांबा या क्लोरोथैलोनिल युक्त कवकनाशी का प्रयोग करें।

स्टेमकैंकर– स्टेम कैंकर तने पर भूरे या काले रंग के कैंकर के रूप में दिखाई देता है, जो तने को घेर सकता है और क्षय का कारण बन सकता है। संक्रमित कैंकर से लाल-भूरे रंग का रस निकल सकता है, जो गंभीर संक्रमण का संकेत देता है। रोग के प्रसार को रोकने के लिए संक्रमित तनों की छंटाई करें और उन्हें हटा दें। पौधे के शेष स्वस्थ भागों की रक्षा के लिए थायोफिनेट मिथाइल कवकनाशी का प्रयोग करें।

एफिड्स– ये छोटे, हरे या काले रंग के कीट पौधे के रस को चूसते हैं, जिससे पत्तियां पीली पड़ सकती हैं। 5 मिली नीम तेल को 1 लीटर पानी और थोड़े से साबुन के साथ मिलाकर हर 10–15 दिनों में छिड़काव करें।

उपज: एक बार निवेश के बाद, यह फसल लगभग 30 वर्षों तक कमाई देती है। कमलम का फल दूसरे साल के अंत से ही उत्पादन शुरू कर देता है, लेकिन 3–4 साल में उत्पादन पूरी तरह से व्यवायिक हो जाता है । एक एकड़ खेत से 5–12 टन तक उपज मिल सकती है। बाजार में 100–120 रुपये प्रति फल की कीमत पर, एक एकड़ से प्रति वर्ष 2–3 लाख रुपये तक का मुनाफा कमाया जा सकता है।

स्ट्राबेरी की उत्पादन तकनीक

स्ट्राबेरी अपने मीठे और स्वादिष्ट फलों के लिए प्रसिद्ध है। इसकी खेती आमतौर पर पहाड़ी इलाके में की जाती है। लेकिन वर्तमान में इसकी खेती मैदानी क्षेत्रों में, जहां सिंचाई एवं जल निकास की उचित सुविधा हो, में सफलतापूर्वक की जा सकती है। भारत में स्ट्राबेरी की खेती पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश के साथ उत्तर पूर्व के क्षेत्रों में व्यवसायिक स्तर पर की जाती है ।

प्रमुख प्रजातियाँ:– मैदानी क्षेत्रों में उत्पादन हेतु प्रजातियाँ चांडलर, सेल्वा, बेलरूबी, चौपटिया अनुपम, सैंगा सैनाना, स्वीट अर्ली, टयोगा, पुजारो, कैमारोजा, स्वीट चार्ली, विंटर डान, फर्न, इत्यादि हैं ।

उपर्युक्त जलवायु:– स्ट्राबेरी मुख्यतः शीतोष्ण जलवायु का पौधा है, लेकिन मैदानी क्षेत्रों में, जहां सिंचाई की उचित सुविधा हो, तापक्रम अप्रैल माह से पूर्व 40 डिग्री सेल्सियस से अधिक न पहुंचता हो, वहां पर भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। स्ट्राबेरी उत्पादन के लिए उपर्युक्त तापमान 13–28 डिग्री सेल्सियस होता है ।

भूमि का चुनावः- स्ट्राबेरी उत्पादन के लिए मुख्यतः कार्बनिक पदार्थों से भरपूर गहरी, रेतीली दोमट मिट्टी सबसे अच्छी होती है। स्ट्राबेरी उत्पादन के लिए उपर्युक्त पीएच मान 5–6.5 के बीच में होना चाहिए।

भूमि की तैयारीः- मैदानी क्षेत्रों में रोपाई के लिए खेत को एक बार मिट्टी पलट हल तथा 2–3 जुताई कल्टीवेटर से करके खेत तैयार करना चाहिए। खेत में उठी हुई क्यारियों को तैयार कर लेते हैं, क्यारियों की चौड़ाई 2.5–3.0 फीट रखते हैं तथा क्यारियों से क्यारियों के बीच की दूरी लगभग 1.5 फीट रखते हैं ।

रोपण सामग्रीः- स्ट्राबेरी के पौधों का रोपण मुख्यतः रनर तथा क्राउन से किया जाता है। रनर के द्वारा प्रवर्धन क्राउन की तुलना में अधिक अच्छा माना जाता है। विभिन्न रोगों से बचाव के साथ-साथ अधिक गुणवत्ता युक्त उत्पादन हेतु टिश्यू कल्चर तकनीक से तैयार पौधों का भी उपयोग रोपण में करते हैं। मैदानी क्षेत्रों में स्ट्राबेरी के पौध रोपण हेतु उत्तम समय सितंबर से अक्टूबर के मध्य माना जाता है, परंतु ठंडी जलवायु वाले स्थानों में इसके पौधों का रोपण फरवरी-मार्च में भी किया जा सकता।

सिंचाई तथा खाद प्रबंधनः सामान्यतः अक्टूबर-नवम्बर में ड्रिप सिस्टम को प्रतिदिन 40 मिनट (20 मिनट सुबह एवं 20 मिनट शाम) तक अवश्य चलायें। स्ट्राबेरी मे 10–15 कुंटल पुरानी सड़ी गोबर की खाद, 80–100 किलोग्राम नत्रजन, 80–100 किलोग्राम फास्फोरस और 50–60 किलोग्राम पोटाश को प्रति हैक्टेअर की दर से खेत में डालते हैं। गोबर की खाद तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा को खेत की अंतिम जुताई के समय ही मिट्टी में मिला कर पाटा लगा देते हैं। नत्रजन की एक तिहाई मात्रा को रोपाई के 15 दिन बाद तथा शेष दो बराबर की मात्रा को जनवरी तथा मार्च के महीने में खेत में डाल देते हैं।

खरपतवार नियंत्रणः स्ट्राबेरी का फल व पौधा दोनों ही बहुत नाजुक होते हैं। पौधों के पास मल्चिंग के पूर्व 20–25 दिन के अंतराल पर निराई व गुड़ाई की जानी चाहिए।

पलवार का उपयोग एवं महत्वः स्ट्राबेरी में कार्बनिक और अकार्बनिक दोनों प्रकार की पलवार का प्रयोग किया जाता है। पलवार के प्रयोग करने से खरपतवारों का जमाव नहीं होता, नमी संरक्षित रहती है तथा फल सीधे भूमि के संपर्क में नहीं आते हैं। जिसमें इसका प्रयोग करते हैं उसमें फलों में सड़ाव नहीं होने पाता।

बीमारी व नियंत्रणः पत्ती धब्बा रोगः इस बीमारी में प्रारम्भ में छोटे गहरे बैंगनी गोल आकार के धब्बे पत्ती की ऊपरी सतह पर दिखाई देते हैं। धब्बे आपस में मिलकर बड़े धब्बे हो जाते हैं, जिससे अंततः पत्ती मर जाती है। रोग नियंत्रण के लिए सर्वप्रथम हल्की सिंचाई करें और रोग ग्रसित पौधे को खेत से बाहर निकाल दें। रोग के अधिक बढ़ जाने पर किसी भी फफूंदी नाशक जैसे मैंकोजेब का प्रयोग कर सकते हैं।

एन्थ्रेक्नोज (ब्लैक स्पाट) रोगः पत्तियों पर गोल काले या हल्के भूरे रंग के गड्ढे बनते हैं। बौने पौधे मुरझाकर पीले हो जाते हैं और रोग की प्रकोप बढ़ने पर गिर जाते हैं। रोग की प्रारंभिक अवस्था में डेकोनिल या किसी अन्य कहपर युक्त कवकनाशी का छिड़काव करें।



रेड कोरः प्रभावित पौधे छोटे आकार के रहते हैं तथा पत्तियाँ नील-हरित शैवाल के रंग की प्रतीत होती है। प्रभावित पौधे की जड़ों को तोड़कर देखने से उनका मध्य भाग लाल रंग का दिखाई पड़ता है। नियंत्रण के लिए संस्तुत मात्रा में फास्फोरस का प्रयोग करें।

कीट व नियंत्रणः थ्रिप्सः इस कीट के शिशु व वयस्क दोनों ही पौधों का रस चूस कर नुकसान करते हैं। इनका प्रकोप फूल आने के समय अधिक होता है। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मिली या डाईमेथोएट 30 ईसी की एक मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10 से 15 दिन के अंतराल पर दो या तीन बार छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त एफिड, लाल मकड़ी, सफेद मक्खी आदि कीड़े भी पत्तियों से रस चूसकर फसल को हानि पहुँचाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए जैविक खेती कर रहे किसान भाई नीम के तेल या साइट्रस आधारित कीटनाशक तेल का उपयोग करें अन्यथा की स्थिति में कोई भी सिस्टमैटिक कीटनाशक का प्रयोग करके फसल को बचाना अति आवश्यक होता है।

तुड़ाई का समय और विधिः स्ट्राबेरी की फसल में रोपण के 4–5 महीने में पैदावार होने लगती है। इसके फलों की तुड़ाई, फल का रंग 70 प्रतिशत से अधिक भाग के लाल हो जाने पर किया जाता हैं। फलों को सावधानीपूर्वक डंठल सहित तोड़ते हैं।

उपजः सामान्य ढंग से देखभाल की गई स्ट्राबेरी की फसल से 100–125 कुंटल प्रति हेक्टेयर फल प्राप्त हो जाते हैं।

पैकिंग एवं विपणनः अत्यधिक नाजुक होने के कारण स्ट्राबेरी के फलों को छोटे एवं पारदर्शी प्लास्टिक के डिब्बे (जिन्हें पुनेट कहते हैं) में पैक करते हैं। एक पुनेट में लगभग 150 से 200 ग्राम फलों को भरा जाता है। सुरक्षित एवं क्षति रहित परिवहन एवं विपणन के लिए वातानुकूलित वाहनों को प्रयोग में लाते हैं। तुड़ाई के तुरंत बाद फलों का विपणन कर देना चाहिये । यदि तुड़ाई के बाद फलों को शीत गृह में नहीं रखा जाता है तो वे 2 दिन में ही खराब हो जाते हैं।

रबी में सब्जियों की खेती

रबी का मौसम सब्जी उत्पादन के लिए बहुत ही अनुकूल है। इस मौसम में विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ सफलता पूर्वक उगाई जाती हैं। इसमें सब्जी पैदा करने में निम्न बातों पर ध्यान देने से उपज एवं लाभ में वृद्धि होगी।

भूमिः रबी मौसम की सब्जी बलुअर दोमट से लेकर मटियार तक हर तरह की भूमि मे उगाई जा सकती है। जिनका पी. एच. मान 8 से अधिक न हो। अगेती फसल उगाने के लिए हल्की भूमि उपयुक्त होती है जबकि भारी दोमट भूमि में फसल देरी से तैयार होती है, परन्तु उपज अधिक होती है।

जीवांशयुक्त खादः सब्जी फसलों की खेती प्रायः सघन की जाती है। अतः भूमि को अच्छी दशा में बनाये रखने के लिए जीवांशयुक्त खाद जैसे-गोबर की खाद, कम्पोस्ट, पत्ती की खाद अथवा मुर्गी की खाद का प्रयोग आवश्यक है। अतः कम से कम 30 टन जीवांशयुक्त खाद का प्रयोग प्रति हेक्टेयर करना चाहिए

टमाटर

प्रजातियाँः कल्यानपुर टा०–1, आजाद टी-2, टी-3, टी०-5,टी० 6, अंगूरलता, पूसा रूबी, पन्त बहार, पूसा अर्ली ड्वार्फ, पंजाब छुहारा एवं पूसा शीतल।

संकरः रश्मि, रूपाली, सोनल, सेन्चुरी-12, अविनाश-2, के०टी०एच०-1, 2 अधिक उपज देने वाली।

बुवाई/रोपाई का समयः सितम्बर-अक्टूबर

बीज दरः सामान्य प्रजातियाँः 400–500 एवं संकर प्रजातियाँः150–200 ग्रा०/है०।

दूरीः 45 X 45 सेमी. या 60 X 60 सेमी। **उर्वरकः** 120: 60: 60 किग्रा० (एन०पी०के०) प्रति हे० ।

सिंचाईः पहली हल्की सिंचाई पौध लगाने के तुरन्त बाद दूसरी सिंचाई 20–25 दिन बाद तत्पश्चात आवश्यकतानुसार सिंचाई 10–15 दिन पर करनी चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रणः 2–3 उथली निराई एवं गुड़ाई।

रोग उपचारः इण्डोफिल एम-45 के (0.2 प्रतिशत) घोल का छिड़काव 10 दिन के अन्तराल पर करें ।

कीट नियन्त्रणः इण्डाक्साकार्ब 14.5 एस.सी. का 0.03 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें ।

उपजः 250–400 कुन्तल/है० तथा संकर प्रजाति 600–700 कुन्तल/ है०

फूलगोभी

प्रजातियाँः अगेती - अर्ली क्वारी, पूसा सिन्थेटिक । मध्यम-पूसा दीपाली, पंत शुभ्रा, इम्प्रूव्ड जैपनीज। पिछेती - स्नोवाल - 17, पूसा स्नोवाल-1, के-1

बुवाई/रोपाई का समयः अगेती-जुलाई, अगस्त, मध्यम सितम्बर, पिछेती-अक्टूबर

बीज दरः अगेती - 700 ग्राम, मध्यम - 600 ग्राम, पिछेती 500 ग्राम/हे०, संकर किस्में- 150–200 ग्राम/हे० ।

दूरीः 45 X 30, 45 X 45, 60 X 60 सेमी० क्रमशः अगेती, मध्यम एवं पिछेती।

उर्वरकः एन०पी०के० - 100:60:60, 120:80:80, 150:100:100 किग्रा०/हे० क्रमशः अगेती, मध्यम एवं पिछेती संकर के लिए 200:100:150 किग्रा/हे०।

सिंचाईः हल्की सिंचाई पौध लगाने के तुरन्त बाद तथा अन्य 10–15 दिन के अन्तराल पर ।

खरपतवार नियन्त्रणः निराई तथा गुड़ाई - 4,3,2 क्रमशः अगेती, मध्यम एवं पिछेती फसल के लिए।

रोग उपचारः कार्बेडाजिम के 0.1 प्रतिशत की दर से घोल को खड़ी फसल में छिड़काव करने से डैम्पिंग आफ रोग के प्रकोप से बचा जा सकता है।

कीट नियन्त्रणः मैलाथियान 50 ई०सी० 1 ली० मात्रा को 625 लीटर पानी में मिलाकर 15–20 दिन के अन्तराल पर छिडकाव करें। उपज- 100–115, 130–145, 150–200 कु० प्रति हेक्टेयर क्रमशः अगेती, मध्यम एवं पिछेती फसल से प्राप्त होती है।

ब्रोकली (हरी गोभी)

प्रजातियाँः पूसा के.टी.एस.- 1, पालम समृद्धि, पालम हरीतिका, ग्रीन स्प्राउटिंग।

संकर किस्मेंः पैक मैन, कैप ओवर, ग्रीन मेल **बुवाईः** सितम्बर-अक्टूबर ।

पातगोभी

प्रजातियाँः प्राइड आफ इण्डिया, गोल्डन एकर, पूसा मुक्ता ।

संकर किस्में: संकर- गणेश, गोल, स्टोन हेड **बुवाई:** रोपाई का समय - अक्टूबर से नवम्बर।

गांठगोभी

प्रजातियाँ: सफेद वियना, बैंगनी वियना-अन्य क्रियायें फूलगोभी की तरह ।

मटर

प्रजातियाँ: आजाद पी०–3, अर्किल, आजाद पी०–1, आजाद पी०–5, बोनविले, पूसा हंस, पंत सब्जी मटर-4 आजाद पी०–4 (रोगरोधी)

बुवाई का समय: अक्टूबर से नवम्बर **बीज दर:** 80–100 किग्रा० प्रति हे०

दूरी: 30 X 10 से.मी. **उर्वरक:** एन०पी० के० 25:60:40 किग्रा० प्रति हे०

सिंचाई: फूल आने के पूर्व तथा फलियों में दाने भरते समय **खरपतवार नियन्त्रण:** आवश्यकतानुसार।

रोग उपचार: कैराथेन 600 ग्राम/हे० की दर से 15 दिन के अन्तर पर अथवा घुलनशील गन्धक 3 कि०/ हे० छिड़काव करने से पाउड्री मिल्ड्यू रोग नियंत्रित होता है।

उपज: 60–100 कु० प्रति हे० हरी फली ।

राजमा

प्रजातियाँ: पूसा पार्वती, कन्टेन्डर, पंत अनुपमा, आजाद राजमा-1

बुवाई का समय: अक्टूबर **बीज दर:** 75–80 किग्रा० प्रति हे० **दूरी:** 40X20 सेमी

गाजर

प्रजातियाँ: कल्यानपुर सुनहरी, पूसा केसर, विलायती नेन्टिस, पूसा यमदग्नि

बुवाई का समय: सितम्बर से दिसम्बर **बीज दर:** 7–8 किग्रा० प्रति हे०

दूरी: 30X10 सेमी **उर्वरक:** (एन०पी०के०) 60:40:20 किग्रा०/ हे०

सिंचाई: आवश्यकतानुसार

रोग उपचार: झुलसा के लिए मैंकोजेब 2 किग्रा० प्रति हे० की दर से 800–1000 ली० पानी में घोलकर छिड़काव करें।

कीट नियन्त्रण: 5 प्रतिशत मैलाथियान की धूल 20 किग्रा० प्रति हे० की दर करें से बुरकाव करें।

उपज: 300–350 कु० प्रति हे०

प्याज

प्रजातियां: कल्यानपुर लाल गोल, पूसा रतनार, पूसा सफेद गोल, एग्रीफाउन्ड लाइट रेड, पूसा रेड, एन एच आर डी एफ रेड, भीमा शक्ति प्रमुख हैं ।

बुवाई का समय: मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर

बीज दर: 10–12 किग्रा० प्रति हे० **दूरी:** 15X10 सेमी

उर्वरक: पहली सिंचाई पौध लगाने के तुरन्त बाद, दूसरी 20–25 दिन बाद तथा अन्य 10–15 दिन के अन्तर पर करनी चाहिए ।

रोग उपचार: पत्ती का बैंगनी धब्बा रोग में मैंकोजेब 2 ग्रा०/ ली० पानी में घोलकर छिड़कें ।

कीट नियंत्रण: मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल का बुरकाव करनी चाहिए ।

प्रजातियां-

लौकी	पूसा नवीन, पूसा समृद्धि, पूसा संतृष्टि, पूसा संदेश, पूसा हाइब्रिड- 2, पूसा विशेष, अर्का बहार, कल्यानपुर हरी, आजाद शंकर लौकी-4
तरोई	पूसा चिकनी, पूसा नसदार, अर्का सुमित, अर्का सुजात, को०-1, आलोक।
करेला	पूसा दो मौसमी, कल्यानपुर बारामासी, पूसा हाईब्रिड-1, आजाद नवीन, नरेन्द्र रश्मि।
खीरा	कल्यानपुर हरा, पूसा शीतल, जापानीज लौंग ग्रीन, पूसा संयोग
टिण्डा	अर्का टिण्डा, पंजाब टिण्डा, अन्नामलाई टिण्डा
ककडी	अर्का शीतल, लखनऊ अर्ली
परवल	IIVR-PG-1ए, PG-2ए, नरेन्द्र परवल-26, नरेन्द्र परवल-307, नरेन्द्र परवल-604
कद्दू	पूसा विश्वास, पूसा विकास, आजाद कद्दू-1, नरेन्द्र अमृत, पूसा शंकर-1, काशी हरित
चिचिण्डा	कोयम्बटूर-4
कुंन्दरू	डी०बी०आर०-के-1, डी०बी०आर० के-2
कुम्हेडा	सी०ओ०-1, सी०ओ०-2
तरबूज	सूगर बेबी, अर्का ज्योति
खरबूज	हरा मधु, पूसा मधुरस, हिसार मधुर, पूसा रसराज

पादप वृद्धि नियामकों का प्रयोग- कद्दू वर्गीय सब्जियों में पादप वृद्धि नियामकों का प्रयोग पौधों की बढ़वार, फूल व फल लगने, लिंग परिवर्तन, अगेती पैदावार तथा कीट एवं बीमारियों के प्रति प्रतिरोधकता पैदा करने के लिए किया जाता है। कद्दू वर्गीय सब्जियों में नर एवं मादा पुष्प एक ही बेल पर अलग-अलग लगते हैं। फल मादा पुष्प से ही बनता है। सामान्यतः पौधे पर नर पुष्प अधिक एवं मादा पुष्प कम लगते हैं। इससे उपज कम होती है। कुछ पादप वृद्धि नियामक प्रयोग करके इस समस्या को कम किया जा सकता है। इन वृद्धि नियमकों के उपयोग से नर फूलों की संख्या कम और मादा फूलों की संख्या बढेगी। साथ ही साथ फल भी अधिक बडे और चमकीले होगें।

फसल	पादप वृद्धि नियामक	मात्रा	प्रयोग का समय
लौकी	मैलिक हाइड्राजाइड, इथरेल	50 ppm, 100 ppm	2 से 4 पत्ती की अवस्था
तरोई	इथरेल	100 ppm	2 से 4 पत्ती की अवस्था
कद्दू	इथरेल	250 ppm	2 से 4 पत्ती की अवस्था
ककडी	इथरेल	25 ppm	2 से 4 पत्ती की अवस्था
टिण्डा	इथरेल	100 ppm	2 से 4 पत्ती की अवस्था
तरबूज	जिब्रलिक एसिड	25 ppm	2 से 4 पत्ती की अवस्था
करेला	साइकोसिल	250 ppm	2 से 4 पत्ती की अवस्था

ग्लेडियोलस उत्पादन तकनीक

यह भारत तथा विश्व के प्रमुख देशों का बहुत ही आकर्षक पुष्पीय पौधा है इसमें 70 से 100 सेमी० तक का पुष्प दण्ड होता है। इसे पहाड़ों के साथ-साथ मैदानों में व्यवसायिक स्तर पर उगाया जाता है। इसे विदेशों को निर्यात भी किया जाता है। स्पाइक सामान्य तापमान पर 15 दिन तक ताजी बनी रहती है। यह उद्यान तथा आन्तरिक साज-सज्जा एवं कट फ्लावर के रूप में प्रयोग हेतु उगाया जाता है।

भूमि तथा तैयारी :- इसकी खेती हेतु उपजाऊ जीवांश युक्त दोमट व बलुई दोमट एवं अच्छे जल निकास युक्त 6.5–7.5 पी एच वाली भूमि उपयुक्त है। भूमि की जुताई मई-जून में करे और शोधन हेतु कड़ी धूप लगने दें। तैयारी के समय 40–50 टन सड़ी गोबर की खाद प्रति हे० मिलाएं ।

जलवायु :- इसके लिए 16 सेल्सियस निम्न व 20–30 सेल्सियस उच्च तापमान उचित वृद्धि व पुष्पन हेतु उपयुक्त है। पुष्पन के समय वर्षा हानिकारक है। पौधों की वृद्धि व विकास खुली धूप में अच्छा होता है।

किस्में :- यूरोविजन (गहरा लाल), अप्सरा (लाल) आस्कर (लाल), नजराना (गहरा लाल), मनीषा (सफेद), स्नोप्रिसेज (सफेद), मीरा (सफेद), फ्रेंडशिप (सफेद व गुलाबी), मयूर (बैंगनी), आरती (लाल), पूनम (पीला), अन्नि रेखा (लाल) यलोस्टोन (पीला), सपना (पीला) सुचित्रा (हल्का गुलाबी) आदि ।

प्रवर्धन :- कंदो व कन्दिकाओं द्वारा होता है। कन्दिकाओं को फूल आने योग्य बनाया जाता है। प्रति पौधा 1–2 कन्द व 10–30 कन्दिकाए तैयार होती है।

कन्द रोपण :- रोपण समय- अक्टूबर से दिसम्बर, **कन्द आकार -** 5–7 सेमी० व्यास वाले कन्द

रोपण दूरी - 30X20 सेमी ० (लाइन से लाइन 30 सेमी० कन्द से कन्द की दूरी 20 सेमी०)।

रोपण गहराई - 6–7 सेमी ०, कन्द की संख्या 1.5 लाख / हे०

खाद एवं उर्वरकः- खेती की तैयारी के समय डाली गयी 40–50 टन गोबर की सड़ी खाद के अतिरिक्त 100 कि० नत्रजन, 200 कि० फास्फोरस तथा 200 कि० पोटाश प्रति हे६ कन्द रोपण से पूर्व प्रयोग करें। बाद में 300 कि० नत्रजल तीन बराबर मात्रा में क्रमशः तीन पत्ती अवस्था, मसले अवस्था (स्पाइक निकालना) शुरू हो तथा स्पाइक काटने के बाद दें। जिससे अच्छी स्पाइक तथा कन्द प्राप्त हो। 5–6 कि०/हे० एजोटोवैक्टर प्रयोग करके 1 / 4 से1 / 3 भाग नत्रजन की बचत की जा सकती है।

सिंचाईः- मिट्टी व मौसम के अनुसार सप्ताह में एक बार स्पाइक निकलने पानी बंद कर दें जिससे गुणवत्तायुक्त स्पाइक तैयार हो।

निकाई-गुडाईः व अन्य क्रियाएं :- समय-समय पर निकाई-गुडाई कर खरपतवार निकाल दें। 25–30 से०मी० लम्बी स्पाइक होने पर मिट्टी चढ़ाए तथा सहारा दें।

फूल की कटाईः- प्रथम फ्लोरेट खिलने के पश्चात लगभग पॉच पत्तियॉ छोड़कर काटना चाहिए। प्रातः काटने के तुरन्त बाद बाल्टी में भरे ठंडे पानी में रखना चाहिए। कटे फूलों के भंडारण के लिए 1.5 से 3.5°C तापक्रम उत्तम रहता है।

उपजः- 30X20 से०मी० की दमरी पर रोपण से लगभग 1.75–2 लाख स्पाइक प्रति हे० होती है।

कन्दों की खुदाई : स्पाइक काटने के 6–8 सप्ताह बाद पत्तियॉ पीली पड़ने पर खोदना चाहिए। खुदाई के 15 दिन पूर्व सिंचाई बंद कर दें। कंद तथा कंदिकाओं को साफ कर कार्बन्डाजिम 2 ग्रा०/ लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर 30 मिनट उपचाति करें तथा लगभग 15 दिन छाया में सुखाकर भंडारित करें। भंडारण के लिए 8 सेंटीग्रेट तापक्रम तथा 80 प्रतिशत आर्द्रता उपयुक्त है।

फसल सुरक्षाः- माहू तथा थ्रिप्स की रोथाम हेतु 0.1 प्रतिशत मैलाथियान का छिड़काव करें। उकठा रोग से बचाव हेतु 0.2 प्रतिशत बैविस्टीन से 30 मिनट कन्दो को उपचारित करें तथा भूमि शोधन भी करें।

द्वि-उद्देश्यीय जौ की खेती से लाभ ही लाभ

पारम्परिक रूप से जौ का उपयोग मनुष्य के खाने तथा पशुओं के आहार /चारे के लिए सदियों से किया जाता है। भारत वर्ष में इसकी खेती मुख्यतः उत्तरी मैदानी क्षेत्र तथा उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र में रबी मौसम में की जाती है। यह अधिकांश तौर पर वर्षा आधारित या सीमित सिंचाई वाली दशाओं में कम उपजाऊ भूमि में उगाया जाता है। शुष्क मैदानी भागों (राजस्थान, दक्षिणी हरियाणा, दक्षिणी पश्चिमी पंजाब, या पश्चिमी उत्तर प्रदेश) में दिसम्बर, जनवरी के मध्य हरे चारे की कमी हो जाती है। इन क्षेत्रों में पानी की कम उपलब्धता के कारण जौं को हरे चारे के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

प्रयोगों के आधार पर निष्कर्ष निकाला गया है कि जौ को द्वि-उद्देश्यीय (चारा - दाना) रूप में उगाया जा सकता है। जिसके लिए बुआई के बाद 50–55 दिन की अवस्था में भूमि से चार इंच ऊपर से एक कटाई ली जा सकती है। दानें एवं चारे दोनो की अधिक उपज प्राप्त करने हेतु बीज दर तथा नत्रजन में 25 प्रतिशत की वृद्धि कर देने से 200–250 कु०/है० हरा चारा तथा 25–30 कु०/हे० जौ के दाने की उपज आसानी से प्राप्त की जा सकती है।

उत्पादन तकनीकी के प्रमुख बिन्दु :

दशा : सिंचित समय से बुवाई

बुआई का समय : 10–25 नवम्बर

बीज की मात्रा : 125 कि०ग्रा०/हे०

प्रजातियाँ : के. 560 (हरितमा) के. 603 (नर्मदा) आजाद, के०141, आर०डी० 2552, के. 1055 (प्रखर), डी.डब्लू.आर.बी. 244, के. 329(मंजुला), आर.डी.3064(करन जौ-1) (दो धारीय) , आजाद जौ-33, आर०डी० 2035, आर०डी० 2715 डी.डब्ल.आर.बी. 223(छिलका रहित जौ)

उर्वरक की मात्रा : 60:30:20 (न०: फा०: पो०), आधी नत्रजन की मात्रा टाप ड्रेसिंग के रूप में दूसरी सिंचाई के बाद करें।

जल प्रबन्धन : तीन सिंचाई (दूसरी सिंचाई कटाई के तुरन्त बाद करें)



गेहूँ की वैज्ञानिक खेती

प्रजातियों का चयनः- विभिन्न रोगों के प्रति अवरोधी, अधिकतम उत्पादन से युक्त तथा ऊष्मा सहनशील प्रजातियों के उपयोग से पैदावार बिना अतिरिक्त खर्च के बढ़ाई जा सकती है। आज विभिन्न कृषि जलवायु की दशाओं में गेहूँ की खेती के लिये उपयुक्त प्रजातियाँ उपलब्ध हैं। जिनका विवरण नीचे तालिका में दिया गया है।

बोने का समय एवं दशा

विलम्ब से बुवाई (असिंचित)	समय से बुवाई (असिंचित) 25 अक्टूबर से 10 नवम्बर 2026	समय से बुवाई (सिंचित) 10 से 15 दिसम्बर	बिलम्ब बुवाई (सिंचित) 05 से 15 दिसम्बर	अति बिलम्ब से बुवाई (सिंचित) जनवरी 15 तक	उसरीली भूमि हेतु 01 से 20 नवम्बर
के-8962 (इन्द्रा), के-9465 (गोमती)	के-1317, के-1616 एच.आई.1612, सी 306,के-8027(मगहर) के-9644 (अटल) के-9351 (मंदाकिनी), के-9465, पीबीडब्लू 443 (गोमती) पीबीडब्लू -175, एचडी 2888,	पीबीडब्लू-915 एच.डी.-3388, के-1006, के-9107 (देवा), के-307(शताब्दी), यूपी-2338, पीबी डी.बी.डब्लू-187 डी.बी.डब्लू-386 डी.बी.डब्लू-826 डब्लू-443, एच. डी-2733, एच.पी.-1731, एचयूडब्लू-468, राज-4120, के-402 (माही), के.बी.डब्लू-107	के-9533 (नैना), के-9162(गंगोत्री), के-7903 (हलना), के-9423 (उन्नत हलना), एन. डब्लू -2036, डीबीडब्लू -14, एच.डी.-2643, मालवीय -234, राज-3765, एन डबलू-1014, एच.डी.-3059, एच.आई-1563, डी.बी.डब्लू-316, पी.बी.डब्लू. 833	के-7903(हलना), के-9423 (उन्नत हलना), के-9533 (नैना), एन डबलू -1014, के-424 (गोल्डेन हलना)	के.आर. एल. 1–4, के.आर. एल. 19, के.आर. एल. 210, लोक-1, के-8434 (प्रसाद), के.आर. एल-283, के.आर. एल. 213

समय पर बुवाई :- गेहूँ की बुवाई समय से करने पर बिना अतिरिक्त व्यय के अधिकतम उत्पादन सुनिश्चित किया जा सकता है। साथ ही साथ बीमारियों एवं कीड़ों का प्रकोप भी कम होता है। समय से बोयी जाने वाली प्रजातियों की बुवाई 25 नवम्बर के बाद करने पर 35 से 40 किग्रा०/हे० प्रतिदिन की दर से उपज में कमी आती है। विलम्ब की दशा में 15 दिसम्बर तक ही बुवाई करें तथा अति विलम्ब की दशा में केवल 15 जनवरी तक ही बोऐं। ऊसर भूमि में समय से 20 नवम्बर तक बुवाई करना चाहिये ।

जैविक उर्वरकों का प्रयोगः कम लागत हेतु जैविक उर्वरकों जैसे, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, नीमैग्स, लीफ मोल्ड, पोल्ट्री खाद, आदि का प्रयोग अवश्य करें।

जीरो टिलेजः कम लागत से अच्छी गेहूँ की पैदावार के लिये जीरो टिलेज जैसी नवीन पद्धति को अपनाना अत्यन्त लाभकारी है यह विधि उन क्षेत्रों के लिये अधिक लाभकारी है जहाँ धान की कटाई देरी से हो पाती है। इस विधि से बुवाई करने में 2000–2500 रुपये, खेत की तैयारी मे लगने वाले खर्च में कमी होती है उपज पारम्परिक विधि की तुलना में लगभग बराबर होती है।

उर्वरक प्रबंधकः गेहूँ में नत्रजन 150 किग्रा०/हे० के साथ 60 किग्रा० फास्फोरस एवं 40 किग्रा० पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर अधिकतम उत्पादन लिया जा सकता है। कुल नत्रजन का 1/2, भाग सम्पूर्ण फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करना उपयुक्त पाया गया है। जबकि नत्रजन का आधा भाग प्रथम सिंचाई के बाद तथा आधा दूसरी सिंचाई के बाद खड़ी फसल में प्रयोग करना लाभप्रद परिणाम दर्शाता है।

जल प्रबंधन में ताज मूल अवस्था, पुष्पावस्था, दूधिया अवस्था एवं दाने भरते समय सिंचाई करने पर गेहूँ की अधिकतम पैदावार ली जा सकती है। गेहूँ की बुवाई के 25 से 30 दिन बाद निराई गुड़ाई करने पर सर्वाधिक उत्पादन लिया जा सकता है। परन्तु श्रमिकों की अनुपलब्धता की दशा में संस्तुत रसायनों जैसे- सल्फोसल्फ्यूरान एवं मेटसल्फ्यूरान की 40 ग्राम/हे० मात्रा 500–600 ली० पानी में मिलाकर बुवाई के 30-35 दिन बाद छिडकाव करने से खरपतवार का नियन्त्रण हो जाता है।

श्री अन्न की खेती की वैज्ञानिक तकनीक

एक सफल किसान के रूप में श्री अन्न की खेती के लिए निम्नलिखित चरणों का पालन आवश्यक है।

बुवाई का समयः अधिकांश श्री अन्न खरीफ (मानसून) की फसलें हैं, जिन्हें जून-जुलाई में बोया जाता है। हालाँकि, सिंचित क्षेत्रों में इन्हें रबी और जायद में भी उगाया जा सकता है।

बीज उपचारः बीजों को बीजामृत या ट्राइकोडर्मा से उपचारित करने पर रोगों की संभावना न्यूनतम हो जाती है।

दूरी और गहराईः छोटे दानों के कारण इन्हें उथला बोया जाता है। कतार से कतार की दूरी 25 से 30 सेमी रखनी चाहिए।

मिश्रित खेती (Intercropping): श्री अन्न के साथ अरहर, मूंग या उड़द जैसी दलहनी फसलें उगाने से भूमि की उर्वरता बढ़ती है और किसान को अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।



दलहनी फसलों की उत्पादन तकनीक

दलहन उत्पादन में विश्वविद्यालय की प्रदेश में महत्वपूर्ण सहभागिता है। रबी दलहनी फसलों में चना, मटर व मसूर की प्रमुख रूप से प्रदेश में खेती होती है।

चना की खेती

भूमिः चने के लिए दोमट, भारी दोमट एवं बुन्देलखण्ड में पड़वा भूमि उपयुक्त है।

भूमि की तैयारीः मिट्टी पलटने वाले हल अथवा हैरो से एक जुताई करके दो जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करें तथा प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाकर खेत तैयार करें।

(अ) समय से बुवाई के लिए प्रजातियाँः पूसा 256, के 850, अवरोधी (उकठा अवरोधी), केडब्ल्यूआर 108 (उकठा अवरोधी), केजीडी 1168 (उकठा अवरोधी), राधे (उकठा अवरोधी), जेजी 315 (उकठा अवरोधी), उदय (केपीजी 59), पन्त जी 114

(ब) देर से बुवाई के लिए प्रजातियाँः उदय (केपीजी 59), पन्त जी 186, पूसा 372, पन्तग्राम 5, जी जे 14, जी एस जी 2207

(स) काबुली प्रजातियाँः प्रगति (के 3256), एल 550, पूसा 267, पूसा 3022, पूसा 1003, शुभ्रा, एच के 94–134।

बीज की मात्राः देशी मध्यम दाने वाली प्रजातियों के लिये 70–80 किग्रा० प्रति हे०, देशी बड़े दाने वाली 80–100 किग्रा० प्रति हे०, काबुली प्रजातियाँ 100–125 किग्रा० प्रति हे० तथा देर से बुवाई की अवस्था में बीज की मात्रा 100–120 किग्रा० प्रति हे० से कम नहीं होनी चाहिए।

बीज उपचारः थीरम 2.5 ग्राम अथवा थीरम 2 ग्राम एवं कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम के मिश्रण की 2 ग्राम मात्रा से प्रति किग्रा. बीज उपचारित करें। फिर 50 ग्राम गुड़ को आधा लीटर पानी के घोल में 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर डालकर प्रति 10 किग्रा. बीज की दर से बीज शोधित करके बोयें।

बोने का समयः असिंचित दशा में अक्टूबर के द्वितीय सप्ताह तक 30 सेमी पंक्तियों की दूरी रखें, सिंचित दशा में नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक बुवाई करें तथा पंक्तियों की दूरी 40 सेमी रखें, तथा पिछेती बुवाई दिसम्बर के माह में करें। बुवाई कूडों में ही करें।

उर्वरकः 20 किग्रा० नत्रजन, 60 किग्रा० फास्फोरस, 20 किग्रा० पोटाश तथा 20 किग्रा० गन्धक की आवश्यकता प्रति हे० होती है। इसकी पूर्ति 100 किग्रा डाईअमोनियम फास्फेट तथा 200 किग्रा० जिप्सम से की जाती है।

सिंचाईः प्रथम सिंचाई 45–60 दिन बाद फूल आने से पहले तथा आवश्यकता होने पर दूसरी सिंचाई फलियों में दाना बनते समय करें। फूल आते समय सिंचाई न करें।

निराई-गुड़ाईः बुवाई के 25–30 दिन बाद पहली तथा सिंचाई के बाद दूसरी निराई/गुड़ाई करें।

खरपतवार नियंत्रणः बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर 3.3 लीटर पेन्डीमेथलीन (30 ईसी) को 600–800 लीटर पानी मिलाकर प्रति हे० खेत में छिड़काव करें।

सहफसली खेतीः चना-राई या चना-अलसी या चना-मसूर या चना-सरसों, चना-गेहूँ तथा चना-जौ, चना-गन्ना

फसल सुरक्षाः- (अ) कीट

कटुआ कीटः लिन्डेन 1.3 प्रतिशत धूल 30 किग्रा० अथवा सेवीड़ाल दानेदार 20–25 किग्रा० प्रति हे० की दर से बुवाई के पूर्व डाले। खड़ी फसल में कीट लगने पर क्लोरपाययरीफास (20 ईसी) की 2–3 लीटर मात्रा/हे० सिंचाई के समय प्रयोग करें।

फली बेधक कीटः डेल्टामोथ्रेन (2.8 ईसी) 350 मिली० या साइपरमेथिरिन (10 ईसी) 500 मिली० या फेनवेलेरेट (20 ईसी) 500 मिली० दवा को 400–500 लीटर पानी में घोलकर कीट के प्रकोप होते समय प्रति हे० की दर से छिड़काव करें। यदि यह उपलब्ध न हो तो क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत 25 किग्रा० प्रति हे० की दर से बुरकाव करें।

(ब) रोगः

उकठाः उकठा अवरोधी प्रजातियां बोयें/रोग ग्रसित खेत में 2–3 वर्ष तक चना न बोयें।

झुलसा- जिरम 80 प्रतिशत का 2 किग्रा० या जिंक मैगनीज कार्बमिट 2 किग्रा० प्रति हे० 600–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें तथा 10 दिन बाद छिड़काव दूसरा करें।

सुखाकर भण्डार गृह में रखे तथा ढोरा कीट से बचाने हेतु अल्युमिनियम फास्फाइड की 2 गोली प्रति मैट्रिक टन की दर से रखकर भण्डार को वायु अवरूद्ध कर दें ।

मटर

भूमिः मटर के लिए दोमट तथा हल्की दोमट भूमि उपयुक्त होती है।

भूमि की तैयारीः खरीफ की फसल काटने के बाद एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल अथवा हैरो से तथा दो जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करके खेत तैयार करें।

संस्तुत प्रजातियाँः

अधिक बढ़ने वाली प्रजातियाँः रचना, पन्त 5, जेपी 885, मालवीय 2, शिखा, अम्बिका एवं आईपी एफ 4–9

कम बढ़ने वाली बौनी प्रजातियाँः अपर्णा (एचएफपी-4), सपना (केपीएमआर 144 - 1), स्वाती, मालवीय 15, इन्द्र (केपीएमआर 400), जय (केपीएमआर 522), आईɛपीɛएफ - 426, आईपी एक **डी 6–3 बीज की मात्रा -** सामान्य प्रजातियों के लिए 80–100 कि०/ हे० तथा बौनी प्रजातियों हेतु 100–125 कि०/ हे० ।



बीजोपचारः थिरम 2 ग्राम या थीरम 2 ग्राम तथा कार्बोन्डाजिम 1 ग्राम/ किग्रा० बीज की दर से बीज शोधित करें। बाद में 200 ग्राम प्रति 10 किलो बीज की दर से राइजोबियम कल्चर से बीज को उपचारित करके बुवाई करें।

बोने का समयः बुवाई का उपुक्त समय 20 अक्टूबर से 20 नवम्बर तक है। पिछेती बुवाई 10 दिसम्बर तक की जा सकती है। पिछेती बुवाई में रचना, शिखा मालवीय-2 प्रजातियाँ ही बोयें। बौनी प्रजातियों में सपना (केपीएमआर 144–1) बोयी जा सकती है ।

उर्वरकः सामान्य दशा में प्रति हेक्टेयर 20 किग्रा० नत्रजन, 40 फास्फोरस, 40 कि० पोटाश तथा 20 किग्रा० सल्फर प्रयोग करें। बौनी प्रजातियों में 40 किग्रा नत्रजन, 60 किग्रा० फास्फोरस, 20 किग्रा० पोटाश तथा 20 किग्रा. सल्फर प्रति हे० की दर से कूड़ों में डालें

सिंचाईः- यदि जाड़ों में वर्षा न हो तो पहली सिंचाई फूल आने के समय तथा दूसरी फलियों में दाना भरते समय करना चाहिए ।

निराई-गुड़ाई :- बुवाई के 25–30 दिन बाद पहली तथा प्रथम सिंचाई के बाद ओट आने पर दूसरी गुड़ाई करना लाभदायक होती है। खरपतवार - पेंडीमिथीलीन (30 ईसी) 3.3 लीटर प्रति हे० की दर से 400–500 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के दो तीन दिन बाद छिड़काव करें।

फसल सुरक्षाः (अ) रोग :-

उकठाः रोग रोधी प्रजातियाँ बोयें तथा 2–3 वर्ष तक उस खेत में मटर न बोये ।

बुकनीः रोग रोधी प्रजातियों को बोयें। 3 किग्रा० गन्धक या थायोफिनेट मिथाइल 70 प्रतिशत का 0.1 प्रतिशत घोल 400–500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हे० की दर से छिड़काव करें।

(ब) कीटः

तनाबेधक मक्खीः- फोरेट 10 जी की 10 किग्रा० या कार्बोफ्यूरान 3 जी की 15 किग्रा६ मात्रा प्रति हे० की दर से बुवाई से पहले भूमि में प्रयोग करें ।

कटाई तथा भण्डारणः पूर्ण पकने पर कटाई करें, बीज सुखाकर तथा कीड़ों से बचने के लिए एल्युमिनियम फास्फाइड की दो टिकिया/मे० टन की दर से रखकर भण्डार को वायु अवरूद्ध कर दें।

मसूर

मसूर दाल नमकीन के रूप में लोकप्रिय है। 24 से 26 प्रतिशत प्रोटीन होने के कारण ही दलहनी फसलों में इसका स्थान है। इसकी खेती सरल तथा कम खर्चीली है तथा असिंचित दशा एवं बरानी क्षेत्रों में आसानी से उगाई जा सकती है।

भूमिः दोमट से भारी दोमट भूमि उपयुक्त रहती है। धान के बाद खाली खेत में इसकी अच्छी पैदावार मिलती है। बुन्देलखण्ड में मार, कावर तथा पड़वा भूमि मसूर की खेती के लिए उपयुक्त है।

भूमि की तैयारीः एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा दो जुताईयाँ देशी हल या कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर भूमि तैयार कर लें ।

बीज की मात्राः सामान्य बुवाई हेतु 40–50 किग्रा० तथा पछैती और उतेरा खेती हेतु 60–70 किग्रा० बीज प्रति हे० पर्याप्त होता है ।

बीजोपचारः बीज जनित रोगों से बचाने के लिए बुवाई से पूर्व बीज को थीरम 2 ग्राम प्रति किग्रा० बीज की दर से उपचारित करें। इसके बाद राइजोबियम एक पैकेट एवं 50 ग्राम गुड़ को आधा लीटर पानी में घोलकर प्रति 10 किग्रा० बीज की दर से उपचारित करें ।

प्रजातियां- मसूर को बीज के आकार तथा बीजभार के आधार पर दो भागों में बांटा गया है,

(i) बड़े दाने वाली प्रजातियां जिनका बीजभार 25 ग्राम से अधिक होता है, इस श्रेणी की प्रमुख प्रजातियां- के-75, आई पी एल-316, आई पी एल-81 एवं डी पी एल-15 हैं।

(ii) छोटे दाने वाली प्रजातियां जिनका बीजभार 25 ग्राम से कम होता है। इस श्रेणी की प्रमुख प्रजातियां- एल-4076, पी एल-406, पी एल-7 हैं तथा मसूर की अन्य प्रमुख प्रजातिया आरवीएल 11–6, के एल बी 2008–4 (कृति), के एल एस 09–3, आई पी एल 526, शेखर मसूर 2 (के एल बी-303), शेखर मसूर 3 (के एल बी-320), के एल एस 218 भी हैं।

मैदानी क्षेत्रः अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर के तृतीय सप्ताह तक ।

पश्चिमी क्षेत्रः नवम्बर के प्रथम सप्ताह से अन्तिम सप्ताह तक ।

सामान्य बुवाई 25 सेमी. तथा पिछेती बुवाई 18–20 सेमी की दूरी पर करनी चाहिए। धान के देर से खाली होने वाले खेतों में खड़ी फसल में ही अक्टूबर के अन्त तक मसूर का बीज छिड़काव करके बो देना चाहिए । इस विधि को उत्तेरा खेती कहते हैं। देर से बुवाई हेतु शेखर मसूर-2 उपयुक्त है।

सिंचाईः यदि खेत में नमी न हो तो फूल आने के एक सप्ताह पूर्व हल्की सिंचाई लाभप्रद रहती है, फूल आने के समय सिंचाई न करे अन्यथा फूल झड़ जायेगें ।

निराई-गुड़ाईः बुवाई के 30–40 दिन पश्चात एक निकाई अवश्य करें ।

खरपतवारः खरपतवार नियंत्रण हेतु पेन्डीमिथिलीन 30 ईसी. 3–3 लीटर दवा को 400–500 पानी में घोलकर बुवाई के दो दिन के अन्दर प्रति हे० छिड़काव करें।

उकठाः रोग रोधी प्रजातियों को बोयें। बीमार पौधों को उखाड़कर फेंक दें। डाईथेन एम० 45 का 0–2 प्रतिशत घोल बनाकर 10–15 दिन के अन्तर पर दो बार छिड़काव करें

कटाई एवं भण्डारणः फसल की कटाई पूर्ण पकने पर करें। बीज को भली भाँति सुखाकर नमी रहित भण्डार गृह में रखें । कीटों से बचाने के लिए बारीक कपड़ों में बाँधकर एल्युमिनियम फास्फाइड की 2 टिकिया/मैट्रिक टन की दर से रखकर भण्डार को वायु अवरूद्ध कर दें ।



तिलहनी फसलों की उत्पादन तकनीक

तोरिया

तोरिया नकदी फसल के रूप में खरीफ व रबी के मध्य बोई जाती है। इसकी अच्छी पैदावार प्राप्त करने हेतु निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

प्रजातियाँ:- टा०-9, पी०टी० 303, पी०टी० 30, पी०टी० 507, भवानी, आजाद चेतना, एवं तपेश्वरी

बीज की मात्रा: 4 किग्रा०/हे० ।

बुवाई का समय: सितम्बर का प्रथम पखवाड़ा परन्तु भवानी प्रजाति की बुवाई सितम्बर के द्वितीय पखवाड़ें में करें।

बुवाई की विधि: बुवाई 30 सेमी. की दूरी पर 3–4 सेमी गहरे कूड़ो में करें ।

उर्वरकों की मात्रा: उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। तोरिया में 80 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा० फास्फोरस तथा 40 किग्रा० पोटाश प्रति हे० सिंचित दशा में देना चाहिए। इसके साथ 25 किग्रा० सल्फर या 200 किग्रा० जिप्सम/ हे० का प्रयोग करना भी आवश्यक है।

विरलीकरण: बुवाई के 15–20 दिन के अन्दर पौधे से पौधे की आपसी दूरी 10–12 सेमी. करें।

सिंचाई: फूल आने के समय तथा दाने बनने के समय नमी की कमी नही होने देना चाहिए। अतः आवश्यकतानुसार सिंचाई करना लाभदायक होता है।

फसल सुरक्षा: झुलसा, सफेद, गेरूई एवं तुलासिता की रोकथाम हेतु जिंक मैगनीज कार्बामेट 75 प्रतिशत 2 किग्रा०/ हे० 600–800 लीटर पानी में मिलाकर शाम के समय छिड़काव करना चाहिए। माहू की रोकथाम हेतु डाईमेथोएट 30 ईसी 1 लीटर/हेक्टेयर 600–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़कें।

राई

राई का अच्छा उत्पादन प्राप्त करने हेतु निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए ।

उन्नत प्रजातियाँ :- टा० 59 (वरुणा), कान्ती (आर०के० 9807). रोहिणी, उर्वशी, माया, बसन्ती (पीली राई), वैभव, वरदान, आशीर्वाद, नरेन्द्र राई 8501, क्रान्ति, आजाद महक (केएम आर (ई) 15–02) एंव सुरेखा (के. एम. आर.-16–27)

बीज की मात्रा: 5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर

बीज शोधन: 2.5 ग्राम थीरम प्रति किग्रा० बीज की दर से शोधित करें।

बुवाई का समय: सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से अक्टूबर का प्रथम पखवाड़ा ।

बोने की विधि: 45 सेमी. की दूरी पर 3–4 सेमी. गहरे कूड़ों में उचित नमी पर बुवाई करनी चाहिए।

उर्वरकों की मात्राः सिंचित दशा में 100–120 किग्रा नत्रजन, 60 किग्रा० फास्फोरस, 60 किग्रा० पोटाश एवं 25 किग्रा० सल्फर या 200 किग्रा० जिप्सम प्रयोग करना चाहिए। असिंचित दशा में खाद की आधी मात्रा प्रयोग करें।

विरलीकरणः बुवाई के 15–20 दिन बाद पौधे से पौधे की आपसी दूरी 15–20 सेमी० अतिरिक्त पौधे निकालकर करनी चाहिए, इससे उपज बढ़ती हैं।

खरपतवार नियंत्रणः बुवाई के तुरन्त बाद जमाव से पूर्व पेन्डीमिथलीन 30 ई.सी. 3.3 लीटर/हे० 800–1000 लीटर पानी में घोलकर खेत में छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाईः फूल आने के समय, फलियों में दाना भरने के समय पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। यदि नमी की कमी हो तो सिंचाई करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा :- झुलसा, सफेद, गेरूई एवं तुलासिता की रोकथाम हेतु जिंक मैगनीज कार्बामेट 75 प्रतिशत 2 किग्रा०/ हे० 600–800 लीटर पानी में मिलाकर शाम के समय छिड़काव करना चाहिए। माहू की रोकथाम हेतु डाईमेथोएट 30 ईसी 1 लीटर /हेक्टेयर 600–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

ट्राईकोडर्मा एक उपयोगी जैव फफूँदी नाशक

भूमि में कवक की अनेक प्रजातियाँ पाई जाती है। कुछ प्रजातियाँ फसलों में रोग उत्पन्न कर हानि पंहुचाती है। लाभदायी फफूँद की प्रजातियों में ट्राइकोडर्मा प्रमुख है। मित्र फफूँद की मात्रा व घनत्व बढ़ाने से भूमि व बीज जनित फफूँद रोग कारकों का उचित प्रबन्धन कर कम लागत में अधिक व सुरक्षित फसल उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। मिट्टी में पाये जाने वाले हानिकारक कवक जैसे- फ्यूजेरियम, फाइटोफ्थोरा, पीथियम, राइजक्टोनिया, स्कलेरोटिनिया आदि बीज के अंकुरण के समय से ही हानि पंहुचाना प्रारम्भ कर देते हैं, इस लिए इस ट्राइकोडर्मा नामक कवक को बीज शोधन एवं भूमि शोधन के द्वारा मिट्टी में पंहुचाकर हानिकारक कवकों का विनाश कराया जाता है। इसके प्रयोग से भूमि, जल, वायु आदि में किसी भी प्रकार का प्रदूषण नहीं होता है एवं फसल बहुत अच्छी एवं निरोग होती है साथ ही साथ आर्थिक दृष्टि से सस्ता भी पड़ता है।

ट्राइकोडर्मा की बहुत प्रजातियाँ हैं लेकिन इनमें से ट्राइकोडर्मा हार्जिएनम एवं ट्राइकोडर्मा विरडी मृदा में बहुतायत से मिलता है। ट्राइकोडर्मा निम्न बीमारियों में अत्यधिक उपयोगी है।

दलहनी फसलों के रोगः चना का उकठा रोग, मटर का उकठा रोग, मटर का तना विगलन रोग, मसूर का उकठा रोग।

सब्जियों का रोगः फूलगोभी एवं पातगोभी का उकठा, तना विगलन, आर्द्रपतन कालर राट, टमाटर का उकठा, परवल का तना विगलन, बैंगन का सड़न एवं गलन, आलू का फाइटोफ्थोरा, प्याज व लहसुन का मृदु विगलन, धनिया का उकठा एवं तना विगलन, अदरक का प्रकंद विगलन आदि।

ट्राइकोडर्मा प्रयोग विधि

बीज शोधनः 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर को प्रति किलोग्राम बीज की दर से मिलायें।

कन्द उपचारः कन्द वाली फसलों के बीज को ट्राइकोडर्मा पाउडर की 10 ग्राम मात्रा को एक लीटर पानी में घोलकर कन्द को आधे घण्टे तक डुबोने के बाद निकाल कर रोपना चाहिए।

भूमि शोधनः एक हेक्टेयर खेत के लिए 2.5 किग्रा० ट्राइकोडर्मा को 60–70 किग्रा० सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट में मिलाकर छाय में एक सप्ताह के लिए रख दिया जाता है। इसके पश्चात पर्याप्त नमी वाले खेत में अन्तिम जुताई के समय भूमि में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए ।

बाग के लिएः पेड़ों के जड़ों के चारो तरफ गड्ढा खोदकर उसमें एक किलोग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर को गोबर की खाद के साथ मिलाकर प्रति पेड़ की दर से भली-भांति मिलाना चाहिए।

प्रयोग में सावधानियांः-

१. इसका प्रयोग अन्य रासायनिक कवक नाशियों के साथ नहीं करना चाहिए परन्तु इसको बीटावैक्स के साथ 3:1 के अनुपात में प्रयोग कर सकते हैं।

२. आवश्यकता पड़ने पर कवकनाशी का प्रयोग लम्बे अन्तराल पर करना चाहिए।

३. यह खुले घावों, श्वास तन्त्र व आंखों के लिए नुकसानदायक है। अतः प्रयोग के समय नाक व मुंह को कपड़े से बाँध लेना चाहिए।

लाभ :-

१. यह आई०पी०एम० का विशेष घटक है।

२. बीज व भूमि उपचार में प्रभावशाली है।

३. पौधों एवं वातावरण में विषाक्त अवशेष नहीं छोड़ता है। अतः मनुष्यों के लिए सुरक्षित।

४. इसका प्रयोग जैविक खाद के साथ किया जा सकता है।

५. यह उत्पादन वृद्धि में सहायक है।

६. फफूंद नाशक रसायनों की तुलना में खर्च कम आता है।



मशरूम की खेती

वर्ष के अलग-अलग समय पर जलवायु, उपलब्ध संसाधनों और बाजार की मांग के अनुसार विभिन्न प्रकार के मशरूम की खेती की जाती है:

प्रजातियाँ	प्रजातियों की विशेषतायें	फसल अवधि	अनुकूल तापमान और आर्द्रता	सब्सट्रेट/ माध्यम	उपयुक्त फसल मौसम
बटन मशरूम	सर्दियों में व्यावसायिक उत्पादन के लिये उपयुक्त।	70–90 दिन	15–20^0 से० (ठंडा मौसम) और आर्द्रता 80–90%	कम्पोस्ट (गेहूँ का भूसा + खाद /पोल्ट्री खाद आदि)	अक्टूबर - फरवरी (मैदानी क्षेत्र)
ऑयस्टर/ ढिंगरी मशरूम	छोटे कृषकों हेत सरल और कम लागत वाली प्रजाति। कृषि अवशेषों गेहूँ के भूसे और धान के पुआल पर खेती की जा सकती है।	45–60 दिन	20–30 डिग्री से० (ठंडा से मध्यम मौसम) और आर्द्रता 80–90 प्रतिशत	गेहूँ/धान का भूसा, मक्का/ज्वार का भूसा, अन्य कृषि अवशेष	अक्टूबर-मार्च (मैदानी क्षेत्र)
मिल्की मशरूम	गर्म एवं आर्द्र परिस्थितियों में उत्पादन के लिये उपयोगी	45–60 दिन	25–35 डिग्री से० (गर्म एवं आर्द्र मौसम) और आर्द्रता 80–90 प्रतिशत	धान/गेहूँ का भूसा तथा अन्य सेलूलोज युक्त कृषि अवशेष	अप्रैल-सितंबर

जलवायु एवं तापमानः बटन मशरूम की वैज्ञानिक खेती के लिए तापमान, आर्द्रता एवं वायु-संचार का उचित नियंत्रण आवश्यक है। इसकी अलग-अलग अवस्थाओं में तापमान की आवश्यकता अलग होती है। स्पॉन रन के लिए लगभग 20–25 डिग्री से०तथा फलन के लिए लगभग 14–18 डिग्री से०तापमान उपयुक्त माना जाता है। खेती का उपयुक्त समय सामान्यतः अक्टूबर से फरवरी के बीच रहता है। उत्पादन कक्ष में पर्याप्त सापेक्ष आर्द्रता बनाए रखनी चाहिए। अत्यधिक तापमान, कम नमी या खराब वायु-संचार से उत्पादन और गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है।

कम्पोस्ट तैयार करनाः बटन मशरूम की खेती में अच्छी गुणवत्ता का कम्पोस्ट सबसे महत्वपूर्ण उत्पादन घटकों में से एक है। कम्पोस्ट तैयार करने में मुख्यतः गेहूँ का भूसा, पोल्ट्री खाद, गेहूँ का चोकर, यूरिया, जिप्सम और पानी का प्रयोग होता है।

स्पॉन एवं स्पॉनिंगः तैयार कम्पोस्ट में प्रमाणित एवं उच्च गुणवत्ता वाले बटन मशरूम का स्पॉन को मिलाया जाता है। स्पॉन को साधारण भाषा में बीज कह सकते हैं। स्पॉन में मशरूम की जीवित मायसीलियम होती है। इसे कम्पोस्ट में समान रूप से मिलाकर ट्रे या पॉलीबैग में भरा जाता है।



मृदा स्वास्थ्य में जैविक खादों का महत्व

सघन खेती एवं रासायनकि उर्वरकों के लगातार प्रयोग से मृदा जीवांश का स्तर अति न्यून हो गया है। मिट्टी के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों में अब सामान्यता स्पष्ट कमी दिखाई देने लगी है।

मृदा स्वास्थ्य में गिरावट के कारणः कृषि में उन्नतिशील प्रजातियों एवं रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उत्पादन में वृद्धि तो हुई परन्तु दूसरी तरफ फसलों द्वारा भूमि से पोषक तत्वों का निष्कासन अधिक हुआ । वर्ष 1950–51 में उर्वरकों द्वारा लगभग 70 हजार टन पोषक तत्वों की पूर्ति हुई और खाद्यान्न का उत्पादन 508 लाख टन रहा। इसी प्रकार वर्ष 1997–98 में 18.30 करोड़ टन खाद्यान्न पैदा हुआ। जिसके लिए 130 लाख टन भूमि से पोषक तत्वों का नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश का निष्कासन हुआ। इस प्रकार 87 लाख टन अधिक पोषक तत्वों का दोहन मिट्टी के भण्डार से हुआ और यह दोहन प्रतिवर्ष हो रहा है, क्योंकि उन्नतिशील प्रजातियों की आवश्यकता के अनुरूप उर्वरकों एवं खादों का प्रयोग नहीं किया जा रहा है। इसके कारण मृदा स्वास्थ्य में दिन प्रतिदिन गिरावट आती जा रही है और पोषक तत्वों का संतुलन भी बिगड़ता जा रहा है। उर्वरकों के असंतुलित प्रयोग के कारण इनकी क्षमता में भी दिनों दिन कमी आती जा रही है। वर्ष 1975–80 के बीच प्रति किग्रा० नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश के इस्तेमाल से 15.3 किग्रा०/ हे० अनाज पैदा हुआ। जबकि वर्ष 1980–85, 1990–95 तथा 2004 में यह घटकर 10.81, 9.2 और 3.4 किग्रा० हो गई। इस प्रकार असंतुलित उर्वरकों के प्रयोग से भरपूर लाभ नहीं मिल पाता है। मृदा को स्वस्थ बनाये रखने हेतु कार्बनिक खाद, हरी खाद, फसल अवशेष तथा जैव उर्वरकों का प्रयोग करें। कार्बनिक खादों तथा फसल अवशेष का फसल उत्पादन एवं मृदा स्वास्थ्य पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है।

जीवांश युक्त खादों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद तथा फसल अवशेष प्रमुख हैं जिनके प्रयोग से पर्यावरण के साथ-साथ मिट्टी की संरचना, जलधारण क्षमता, मृदा उर्वरता तथा मिट्टी के भौतिक रासायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि होती है। जीवांश पदार्थ के विघटन से अनेकों अल्प अणुभार के कार्बनिक अम्ल, फास्फोरस, जिंक, आयरन, मैगनीज, कापर तथा बोरान की मिट्टी में स्थिरीकरण कम करके फसलों को उनकी उपलब्धता बढ़ाने में सहायक होते हैं। कार्बनिक खादों के प्रयोग से कृषि उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार होता है और उनका मूल्य भी बहुत अच्छा मिलता है। यद्यपि हमारे देश में पशुओं की संख्या विश्व के अन्य देशों की तुलना में अधिकतम है किन्तु गोबर का अधिकांश भाग ग्रामीण क्षेत्रों में ईधन के रूप में प्रयोग एवं उर्वरकों की सहज उपलब्धता तथा त्वरित परिणामों के कारण लोकप्रियता, जीवांश युक्त खादों के प्रयोग में बाधक रही है।

जैव उर्वरकों से पोषक तत्वों की पूर्ति एवं मृदा स्वास्थ्य पर प्रभावः जैव उर्वरक रासायनिक खादों के विकल्प तो नहीं है, परन्तु उनके पूरक अवश्य हैं इनके प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों की मात्रा में कमी की जा सकती है। टिकाऊ, खेती तथा मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए जैव उर्वरकों का इस्तेमाल भी आवश्यक है। इनकी कीमत भी कम होती है । जैव उर्वरकों के प्रयोग से मृदा उर्वरता बढ़ने के साथ ही मृदा गुणों में सुधार होता हैं। जैव उर्वरकों से हारमोन, विटामिन्स तथा आक्जिन्स निकलते हैं, जो पौधों की वृद्धि में सहायक होते हैं। दलहनी फसलों में राइजोबियम जैव उर्वरक तथा धान में नील हरित शैवाल (बी.जी.ए.) से औसतन 30 किग्रा नत्रजन प्रति हे० की जा सकती है। इसके साथ-साथ अन्य जैव उर्वरकों जैसे एजोटोबैक्टर, एजोस्पीरीलम, पी.एस.बी. तथा वैम का भी फसल उत्पादन में योगदान होता है। इस प्रकार टिकाऊ खेती के लिए जैव उर्वरक एक महत्वपूर्ण अंग है।

जैविक खादों एवं जैव उर्वरकों द्वारा उर्वरकों के समतुल्य पोषक तत्वों की पूर्ति

जैव उर्वरक प्रयोग करने की सर्वोत्तम विधि बीज उपचार है अतः एक पैकेट जैव उर्वरक 10 किग्रा० बीज उपचार के लिए पर्याप्त होता है, बीज उपचार करके उसी दिन बुवाई करें।

जैव उर्वरक	निवेश की मात्रा	उर्वरकों के रूप में पोषक तत्वों की समतुल्य मात्रा
राइजोबियम	एक कल्चर पैकट/10 किग्रा० बीज	30–50 किग्रा० नाइट्रोजन
एजोटोबेक्टर	एक कल्चर पैकट/10 किग्रा बीज	20 किग्रा० नाइट्रोजन
नील हरित शैवाल	10 किग्रा० प्रति हे० क्षेत्र	20–30 किग्रा० नाइट्रोजन

पशुपालन कैसे करें ?

पशु की आवास व्यवस्था :-

1. पशुशाला का निर्माण ऊँचे स्थान पर करें। ताकि उस स्थान पर पानी न भर पाये ।
2. पशु के खड़े होने के स्थान आगे से पीछे की ओर ढाल वाला हो तथा चिकना न हो वरना पशु के फिसलने का खतरा रहता है।
3. खुला हवादार स्थान हो तथा फर्श पक्का हो ।
4. गोबर व पेशाब गड्ढे में ही एकत्र कर खाद बनानी चाहिये ।
5. पशुशाला की सफाई नियमित रूप से दो बार करें।
6. पशुशाला के पास छायादार वृक्ष अवश्य हो ।
7. पशुओं को स्नान कराने की व्यवस्था हो ।

पशु के साथ ऐसा अवश्य करें :-

1. नवजात बच्चों को माँ का पहला दूध (खीस) ब्याने के तुरन्त बाद शीघ्रति- शीघ्र अवश्य पिलायें ।
2. ब्याने के तुरन्त बाद बच्चे की नाल काट कर उसमें टिन्चर आयोडीन लगा दें ।
3. दुधारू पशुओ को 30–30 ग्राम नमक व खड़िया तथा 50 ग्राम मिनरल पाउडर प्रतिदिन देना चाहिए ।
4. पशु को तरल औषधि पिलाते समय इस बात की विशेष सावधानी रखें कि कहीं औषधि की कुछ मात्रा श्वांस नलिका में न पहुँच जाये ।
5. अधिक दूध देने वाले पशु विशेषकर जर्सी, होलस्टीन-फ्रीजियन तथा संकर गायों को कैलसियम युक्त औषधि जैसे ओस्टो-कैल्सियम, बी-12 सिरप आदि समय-समय पर अवश्य पिलायें या राशन के साथ दे ।
6. पशुओं को संक्रामक रोगों से बचाव हेतु सामयिक सुरक्षात्मक टीकाकरण अवश्य ही लगवा देवें ।
7. पशुओं का बीमा अवश्य करायें ।
8. पशुओं की देखभाल आप स्वयं करें ।



दुधारू पशुओं का खान पानः

1. पशुपालन में 70 प्रतिशत से अधिक खर्च पशुओं के खिलाने पर होता है ।
2. दुधारू पशुओं को रोजाना कम से कम 25 किग्रा० हरा चारा अवश्य दें ।
3. पशुओं के अधिक दूध उत्पादन के लिये संतुलित आहार खिलायें ।
4. एक कुन्तल सन्तुलित दाना बनाने के लिए, अनाज (गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का व जई कोई भी) 40 किग्रा०, सरसों की खली 27 किग्रा०, चोकर 30 किग्रा०, खड़िया 1 किग्रा०, नमक 1 किग्रा० व खनिज मिश्रण 1 किग्रा० मिलाना चाहिए ।
5. संतुलित दाने को भैंस में 2.5 ली० / किग्रा० व गाय में 3.0 ली०/ किग्रा० दूध उत्पादन के हिसाब से देना चाहिये ।
6. संकर नस्ल के अधिक दूध देने वाले पशुओं को 6–6 घंटे के अन्तराल पर चारा व दाना दोनों देने चाहिए ।

दूध दुहते समय कुछ ध्यान देने योग्य बातेंः-

1. दूध दोहन का कार्य नियमित रूप से निश्चित समय पर किया जाये । यानि दुहाई का अन्तराल बराबर होना चाहिये ।
2. पशु के पिछले अंगों, थनों तथा अयन को भली प्रकार साफ कर लिया जाये । यदि सम्भव हो तो किसी कीटनाशक घोल से साफ कर
3. दुहाई का कार्य स्वच्छ तथा निरोग ग्वालों द्वारा ही कराया जाये ।
4. दूध दोहने के बर्तन स्वच्छ तथा चौड़े मुँह के होने चाहिए।
5. दोहन का कार्य शीघ्रता से व शांति पूर्वक तथा पूर्ण रूप से किया जाये। दुहाई में अधिक से अधिक 7 मिनट का समय लगाना चाहिए क्योंकि इतने समय तक पशु ढंग से पन्हाया रहता है।
6. सूखे हाथों से दुहान करना चाहिए ।
7. थन से दूध की पहली कुछ धारें किसी अलग बर्तन में लेनी चाहिए।
8. दोहन के समय तीव्र गन्धवाला आहार न खिलायें, इससे दूध में गंध आ जाती है।

ग्रामीण महिलाओं हेतु कुटीर उद्योग

महिलाएं जीवन के प्रत्येक पहलू में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। ग्रामीण महिला का राष्ट्रीय आय में ग्रास नेशनल प्रोडक्ट (जी.एन.पी.) और ग्रास डामेस्टिक प्रोडक्ट (जी.डी.पी.) को बढ़ाने में बहुत बड़ा योगदान है। स्वतंत्रता के पश्चात कुछ सम्मानित महिलाओं तथा अन्य समाजसेवियों ने महिलाओं की स्थिति सुधारने हेतु अनेक प्रयत्न किये तथा अनेक संस्थाओं स्थापना की जो उन्हें समाज में न्याय, सम्मान, समानता और स्वतन्त्रता का अधिकार दिलाने में अपना योगदान देती हैं। महिलाओं की सशक्तिकरण के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें उनके अधिकारों व महत्व से अवगत कराया जाए। उन्हें शिक्षा व रोजगार के अवसर प्रदान कराए जाएं। जिससे वे अपने नित्य घरेलू कार्यों को करते हुये अपनी आय को भी बढ़ा सकें ।

योजनाएं: स्वयं सिद्धा स्त्री शक्ति परियोजना

कुटीर एवं लघु उद्योग के लिए क्लस्टर विकास कार्यक्रम, सूक्ष्म एवं लघु उद्योग के लिए क्रेडिट गारंटी फंड स्कीम।

वित्तीय संस्थाएं:

कुटीर उद्योगो के प्रोत्साहन हेतु बहुत सी वित्तीय संस्थाए कार्यरत है जैसे:

1. नाबार्ड एवं अन्य बैंकिंग संस्थाएं
2. प्रधानमंत्री मुद्रा योजना
3. बहु उद्देश्यीय सहकारी समितियाँ व सहकारी बैंक
4. कृषि उत्पादक संगठन
5. स्टार्ट अप
6. स्वंय सहायता समूह

प्रमुख तकनीकी शिक्षण संस्थाएं :-

1. कृषि विज्ञान केन्द्र
2. महिला एवं बाल विकास विभाग
3. कौशल विकास केन्द्र
4. कृषि सम्बन्धी जनपदीय विभाग
5. स्वयं सेवी संस्थाएं
6. जिला कार्यक्रम अधिकारी कार्यालय
7. जिला एवं क्षेत्रीय प्रशिक्षण संस्थान

ग्रामीण महिलाओं हेतु उद्यम: उपकरणों की मरम्मत का व्यवसाय, उपकरणों को किराए पर देने का व्यवसाय, नर्सरी स्कूल चलाना, होटल चलाना, ब्यूटी पार्लर चलाना, खाद्य पदार्थों का विक्रय करना, कम्प्यूटर ट्रेनिंग सेन्टर चलाना, टाइप राइटिंग इन्स्टीट्यूट चलाना, हेल्थ क्लीनिक चलाना, बुके शाप चलाना (पौधे की नर्सरी तैयार करना), मशरूम की खेती करना, पत्ते के दोने बनाना, खाद तैयार करना, मसाले पीसना, दाले बनाना, दुग्ध एवं डेरी उद्योग, हस्तकला उद्योग, गोंद बनाना, धागे बनाकर उनका विक्रय करना, फल एवं सब्जियों का प्रसंस्करण, गुणवत्तायुक्त खाद्य तैयार करना ।

महिलाओं की उद्यमिता को प्रभावित करने वाले कारक: महिलाओं की परिवर्तनीयता, पुरूषों का महिलाओं के प्रति अनैतिक व्यवहार, रूढ़िवादिता, अशिक्षित महिलाओं की अधिक घरेलू, जिम्मेदारियाँ, जागरूकता की कमी, पर्याप्त सहयोग की कमी, ऋण प्राप्त करने में कठिनाई।

महिलाओं के विकास के लिए ये आवश्यक है कि उन्हें उन्नति के अवसर दिए जाएं

लिज्जत पापड़ गुजरात में, अमूल डेरी उद्योग मध्य प्रदेश में कई वित्तीय स्वयं सहायता समूह है जो कि कुटीर उद्योग के रूप में महिलाओं द्वारा ही शुरू किये गये है, परन्तु आज ये व्यवसाय बड़े उद्योगों का रूप धारण कर चुके है। हम अपनी प्रदेशों की महिलाओं से भी आवाहन करते है कि वह भी इस तरफ अपना ध्यान देगीं और दूसरे प्रदेशों की तरह अपने प्रदेश को भी उद्यमिता की तरफ आगे बढ़ायेगी। कुटीर उद्योग की शुरूआत समूह बनाकर आसानी से की जा सकती है। इससे ऋण प्राप्त करने में आसानी होती है। स्वयं सहायता समूह बनाकर भी कुटीर उद्योग धन्धों की शुरूआत की जा सकती है। महिलायें इन कार्यों से अपने घर की आमदनी बढ़ा सकती हैं।



प्रसार निदेशालय द्वारा संचालित कृषि प्रसार के कार्यक्रम

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर द्वारा कृषकों की सेवार्थ नये-नये माध्यम विकसित किये गये हैं। विश्वविद्यालय द्वारा चलाये जा रहे प्रसार कार्यक्रमों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है-

1. कृषि विज्ञान केन्द्रः विश्वविद्यालय कार्यक्षेत्र के 22 जनपदो में से 14 जनपद रायबरेली, फतेहपुर, अलीगढ़, मैनपुरी, कानपुर देहात, कन्नौज, कासगंज, औरैया, लखीमपुर खीरी, हरदोई, फर्रुखाबाद, फिरोजाबाद, इटावा एवं हाथरस में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा शत-प्रतिशत वित्त पोषित कृषि विज्ञान केन्द्र योजना चलायी जा रही है । प्रत्येक केन्द्र पर 10–20 हे० प्रक्षेत्र उपलब्ध है। इन केन्द्रों का मुख्य उद्देश्य नव सृजित तकनीकी का परीक्षण एवं शुद्धीकरण करना है तथा इस प्रक्रिया से चिन्हित तकनीकी को कृषकों के खेतों पर प्रदर्शित करना है ।

- कृषकों /कृषक महिलाओ को सामयिक प्रशिक्षण ।
- ग्रामीण युवकों/ युवतियों को रोजगार परक प्रशिक्षण ।
- कृषकों के खेतों पर फसल प्रदर्शन आयोजित करना ।
- कृषि तकनीकी के विभिन्न अवयवों से सम्बन्धी तकनीकी सलाह देना ।
- प्रसार कर्मियों को सामयिक प्रशिक्षण ।
- कृषकों की सहभागिता से अनुकरणीय परीक्षण आयोजित करना अन्य प्रसार कार्यक्रम जैसे किसान मेला/ कृषक गोष्ठी /प्रक्षेत्र दिवस आयोजित करना ।

2. कृषि तकनीकी सूचना केन्द्रः भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के सहयोग से कृषि प्रसार को सशक्त एवं प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से कृषि विश्वविद्यालय, कानपुर के मुख्य प्रवेश द्वार पर कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र स्थापित किया गया जिसका उद्देश्य कृषकों को एक स्थान से निम्न सेवायें उपलब्ध कराना।

- किसानों को बीज, मृदा एवं जल परीक्षण सम्बन्धी सेवायें एवं सलाह प्रदान करना ।
- किसानों को तकनीकी उत्पाद जैसे - बीज, पौध, उन्नतशील पशु परिष्कृत उत्पाद, जैव उत्पाद आदि उपलब्ध कराना ।
- किसानों को साहित्य एवं श्रव्य-दृश्य माध्यमों द्वारा तकनीकी जानकारी पहुँचाना।

3. प्रशिक्षण एवं सम्पर्क योजनाः वर्ष 1985–86 में उ०प्र० सरकार द्वारा विश्व बैंक के वित्तीय सहयोग से प्रशिक्षण एवं सम्पर्क योजना संचालित की गई जिसका प्रमुख उद्देश्य निम्न है ।

- विश्वविद्यालय कार्यक्षेत्र के जनपदों में प्रत्येक वर्ष तीन पूर्व मौसमी (खरीफ, रबी एवं जायद) कार्यशालाओं का आयोजन कर उत्पादन वृद्धि हेतु रणनीति तैयार करना ।

- मासिक कार्यशालाओं का आयोजन कर अगले माह हेतु प्रभावी बिन्दु तैयार करना।
- विशेष प्रशिक्षणों से तकनीकी हस्तानान्तरण, सामयिक साहित्य उपलब्ध कराया जाना।
- समस्याओं के समाधान हेतु संयुक्त दल द्वारा सर्वेक्षण
- सर्वेक्षण से प्राप्त समस्याओं पर शोध आयोजित करना।

4. कृषक तकनीकी प्रशिक्षण कार्यक्रमः उ०प्र० सरकार के वित्तीय सहयोग से विश्वविद्यालय द्वारा कृषक तकनीकी प्रशिक्षण योजना वर्ष 1998–99 में संचालित की जा रही है जिसमें प्रत्येक गांव में कम से कम एक कृषक को तीन दिवसीय तकनीकी प्रशिक्षण दिया जाना प्राविधानित है। प्रशिक्षित कृषकों को विश्वविद्यालय के सम्पर्क कृषक के रूप में चिन्हित किये जाने का प्रावधान है। जो विश्वविद्यालय द्वारा विकसित तकनीक को सुदुर ग्रामीणों तक पहुँचा रहे हैं।

5. कृषक समितिः विश्वविद्यालय का कार्यक्षेत्र प्रदेश के 22 जनपद तक विस्तृत है। अतः विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं के अतिरिक्त कृषकों की भागीदारी बढ़ाने हेतु वर्ष 1987–88 से कृषकों ने जनपद/ ब्लाक /गांव स्तर पर समिति के रूप में संगठित होने का प्रयास किया है। विश्वविद्यालय मुख्यालय एवं जनपद स्तर पर 'चन्द्र शेखर कृषक समिति' के नाम से कृषकों ने एक संगठन बनाया है जो कृषकों की आवश्यकतानुसार विश्वविद्यालय के विभिन्न केन्द्रों से सामंजस्य बैठाकर तकनीकी हस्तानन्तरण में सहयोग दे सकेगें। मुख्यालय कानपुर पर प्रत्येक माह की 5 तारीख को बैठक आयोजित की जाती है।

6. कृषक हेल्पलाइन सेवाः एटिक पर कृषक हेल्प लाइन सेवा द्वारा कृषकों एवं अन्य उपभोक्ताओं द्वारा पूछी गयी समस्याओं का वैज्ञानिक द्वारा तुरन्त निराकरण किया जा रहा है। (निःशुल्क सेवा फोन नं० 18001805122 पर बिना एस०टी०डी० कोड मिलायें।) विश्वविद्यालय कार्य दिवसो में 1:00-3:00 बजे के बीच कृषक या अन्य उपभोक्ता अपनी समस्या पूछ सकता है।

7. अखिल भारतीय किसान मेला एवं कृषि उद्योग प्रदर्शनीः कृषि विश्वविद्यालय प्रांगण में प्रत्येक वर्ष दो बार मार्च एवं अक्टूबर में मेला का सफलता पूर्वक आयोजन किया जाता है। कृषकों को नवीनतम कृषि तकनीकी जानकारी मिलती है तथा विभिन्न फसलों की उन्नतशील प्रजातियों का बीज, कृषि यंत्र, कीटनाशक, रासायनिक उर्वरक, आदि कृषकों को क्रय हेतु उपलब्ध कराया जाता है। मेला के दौरान प्रत्येक दिन कृषक गोष्ठी का आयोजन भी किया जाता है जिसमें कृषकों वैज्ञानिकों एवं अधिकारियों में आपसी विचार विमर्श होता है तथा कृषकों की तकनीकी एवं कृषि निवेश सम्बन्धी समस्याओं का समाधान किया जाता है।



कृषि योजनाओं का नाम			
1.	श्री अन्न योजना (Shree Anna Yojana)		
2.	राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन योजना		
3.	फसल विविधीकरण कार्यक्रम (सीडीपी) योजना		
4.	सब मिशन आन ऐग्रिकल्चरल एक्सटेंशन (SMAE)		
5.	सब मिशन आन सीड्स एण्ड प्लान्टिंग मैटेरियल (एस०एम०एस०पी०) बीज ग्राम योजना		
6.	सब मिशन आन एग्रीकल्चरल मेकेनाइजेशन एवं प्रमोशन अ ाफ एग्रीकल्चरल मैकेनाइजेशन फार इन सीटू मैनेजमेण्ट आफ क्राप रेज्डयू योजनान्तर्गत सुविधाएं		
7.	द मिलियन फार्मर्स स्कूल (किसान पाठशाला)		
8.	सतत् कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन (National Mission for sustainable Agriculture)		
9.	जैविक खेती प्रोत्साहन योजना		
10.	रेनफेड एरिया डेवलपमेंट प्रोग्राम (RADP)		
11.	प्रमाणित बीजों के वितरण पर अनुदान की योजना (राज्य सेक्टर)		
12.	पीएम- कुसुम योजनान्तर्गत वर्ष 2022–23 में सोलर सिंचाई पम्प वितरण योजना		
13.	मृदा में सूक्ष्म तत्वों की कमी को दूर करने एवं भूमि सुधार हेतु जिप्सम वितरण योजना		
14.	प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पर ड्राप मोर क्राप)		
15.	पंडित दीनदयाल उपाध्याय किसान समृद्धि योजना		
16.	प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना		
17.	प्रधानमंत्री कृषि सम्मान निधि योजना (पी.एम-किसान) योजना		
18.	किसान क्रेडिट कार्ड योजना		
19.	कृषक उत्पादन संगठन (एफ०पी०ओ०)		
20.	पर ड्राप मोर क्राप (माइक्रोइरीगेशन), ड्रिप एवं स्प्रिंकलर सिंचाई		
21.	राष्ट्रीय कृषि विकास योजना में संकर शाकभाजी उत्पादन		
22.	गोवंशीय पशुओं में वर्गीकृत वीर्य (सेक्स सीमेन) के उपयोग की योजना (राज्य योजना)		
23.	मा० मुख्यमंत्री निराश्रित / बेसहारा गोवंश सहभागिता योजना		
24.	प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना (पी.एम.एम.एस.वाई)		
25.	पुष्प क्षेत्र विस्तार	26.	बैकयार्ड पोल्ट्री कार्यक्रम
27.	संरक्षित खेती को बढ़ावा देना	28.	प्राकृतिक खेती योजना
29.	मसाला क्षेत्र विस्तार	30.	फसल अवशेष योजना (CRM)
31.	रोपण सामग्री का उत्पादन	32.	जोखिम प्रबन्धन एवं पशुधन
33.	खाद्य प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना	34.	गन्ना विभाग द्वारा संचालित योजनाएं
35.	अनुसूचित जाति उपयोजना (SCSP)	36.	अनुसूचित जनजाति योजना (TSP)



जनपद स्तर पर स्थापित के.वी.के. अध्यक्षों/प्रभारियों एवं वि.वि. के वैज्ञानिकों के नाम व मो. नम्बर

जनपद	अध्यक्ष/प्रभारी का नाम	मोबाइल नं.
अलीगढ़	डॉ. अनन्त कुमार	9410852089
कन्नौज	डॉ. वी. के. कनौजिया	9415488976
कानपुर देहात	डॉ. अजय कुमार सिंह	9415265205
हरदोई	डॉ. अवधेश कुमार तिवारी	9415190350
लखीमपुर खीरी	डॉ. एस. के. विश्वकर्मा	9415716654
रायबरेली–1	डॉ. के. के. सिंह	9415937398
रायबरेली–2	डॉ. संजय सिंह	8318134903
फतेहपुर	डॉ. साधना वैश	7233085841
फर्रुखाबाद	डॉ. भूपेन्द्र कुमार सिंह	6393919930
इटावा	डॉ. एम. के. सिंह	9415154822
मैनपुरी	डॉ. प्रणवीर सिंह	9450342609
फिरोजाबाद	डॉ. विनोद प्रकाश	9411941294
हाथरस	डॉ. श्योराज सिंह	9454346490
कासगंज	डॉ. विकास रंजन चौधरी	9415153408
औरैया	डॉ. राम पलट	9450812571
दलहन	डॉ. अखिलेश मिश्रा	9415480433
तिलहन	डॉ. महक सिंह	7905148547
शाकभाजी	डॉ. केशव चन्द्र आर्या	9415161749
उद्यान/फल विज्ञान	डॉ. वी. के. त्रिपाठी	8299373118
पशुपालन	डॉ. रामजी गुप्ता	9450343985
खरपतवार नियंत्रण	डॉ. नौशाद खाँन	7860786422
कीट विज्ञान	डॉ. मुकेश श्रीवास्तव	9839818899
पादप सुरक्षा/मशरूम उत्पादन	डॉ. मुकेश श्रीवास्तव	9839818899
अनुवाशिंकी/बीज उत्पादन	डॉ. वी. के. यादव	7376105454
बीज विज्ञान	डॉ. सी. एल. मौर्य	9140967297
भूमि संरक्षण एवं जल प्रबंधन	डॉ. कौशल कुमार	8299237060
मृदा विज्ञान	डॉ. सर्वेश कुमार	9935202988
पादप शरीर क्रिया विज्ञान/प्रसार	डॉ. राजीव कुमार	9411056989
गृह विज्ञान विभाग	डॉ. सीमा सोनकर	9628574203
सस्य विज्ञान	डॉ. जफर सिद्दिकी	8887930849



प्रसार निदेशालय

चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर